सहेली के पत्र



मिसेज सय्यद क़ासिमअली,
साहित्यालङ्कार।
नरसिंहपुर, सी. पी.

सहेली के पत्र

लेखिका

मिसेज सय्यद क़ासिमअली,

साहित्यालङ्कार

नरसिंहपुर, सी० पी०



प्रकाशक

नवलकिशोर-प्रेस, बुकडिपो,

लखनऊ

१९३७

प्रार्थना



दीनबन्धु ! देवेन्द्र द्रुति दयानाथ देवेश ।
दनुज-दैत्य-दानव-दलन, द्रति-द्रुम-दरण, दिनेश ॥
तापविकार सबै हरो जो कुछ होय शरीर ।
अबला सबला कीजिये हरिये हमरी पीर ॥



भूमिका



यह सुधारक युग है, चारों ओर सुधार की पुकार उठ रही है। समाज के अन्दर जो रूढ़ियाँ हैं, जिनके कारण समाज को हानि दिखाई देती है अथवा जिन्हें लोग सामूहिक रूप से हानिकारक समझ रहे हैं, उन्हें उखाड़ फेंकने के लिये कई सुहृदय मचल रहे हैं। नानाप्रकार के नियम-उपनियम बनाकर ताज़ीरात हिन्द की धाराओं के समान बना देना चाहते हैं। परन्तु मुख्य बात पर अर्थात् स्त्री-समाज के सुधार पर जैसा चाहिये वैसा सरल मार्ग नहीं बताया जा रहा है। कुछ हिन्दी लेखकों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है; परन्तु अभी तक कोई ऐसी सरल भाषा की पुस्तक, जो जनसाधारण के हाथ में पहुँच कर समाज का सुधार कर सके, नहीं निकली। हिन्दी-साहित्य में यह कमी खटक रही थी। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि महिलाओं ने अपने सुधार की बागडोर अपने ही हाथ में लेना आरम्भ कर दिया है। यथार्थ में उनका कल्याण ....

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥ गीता १८।४६

....के अनुसार हो सकता है।

"सहेली के पत्र" की लेखिका एक मुस्लिम भद्र महिला

है। आप श्रीयुत सय्यद कासिमअली साहित्यालङ्कार की धर्मपत्नी हैं। सय्यद सा० हिन्दी-संसार के चमकते तारे हैं। अपने पति के सहयोग से आप भी हिन्दी-साहित्य और स्त्री-समाज की सेवा करने पर तत्पर हुई है। आपने इस छोटी सी पुस्तक में स्त्रियोपयोगी बारीक से बारीक विषयों पर बहुत ही सरल भाषा में ओज भरकर विवेचन किया है। पुस्तक में धारावाही आवश्यक पत्रो के समावेश से रोचकता कई गुनी बढ़ गई है। कुछ पत्र अखबारों मे प्रकाशित हो चुके हैं, इसलिये सुविख्यात महिलाओ ने पुस्तकाकार कराने की प्रेरणा की, जिसकी पूर्त्ति लेखिका ने भली भाँति कर दिखाई है।

यदि हिन्दी-ससार की उदार आत्माओं ने इस पुस्तक को अपनाया तो हमारी उक्त लेखिका का प्रोत्साहन आगामी क्षेत्र में विशेष अवतीर्ण हो सकेगा। मुझे पूर्ण आशा है कि माताएँ व बहनें इस पुस्तक से विशेष लाभ उठाकर हिन्दी-साहित्य की कमी को पूर्ण कराने का श्रेय प्राप्त करेंगी। यदि प्रान्तीय शिक्षाविभाग ने इस पुस्तक को कन्याओं के लिये पाठ्य पुस्तक स्वीकृत कर दी तो अति उत्तम होगा।

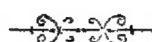
बेतूल
ता० ११-६-३५ ई०

हरसेवकलाल खास क़लम
बी० ए०, एल-एल० बी०

विषय-सूची



सहेली के पत्र



पत्र १

हँसमुखपन

सेठ बैलखेड़ी

६ मार्च, १९३३

प्रिय बहन !

सादर अभिवादन।

भई ! मैं तुम्हारे पत्रों से बहुत ऊब गई हूँ। हमेशा रोना और वही पुराना चर्खा चलाना मुझे अच्छा नहीं लगता। तुम आखिर रोती ही क्यों हो ? रोने से क्या मिल जाता है ? क्या तुम दूसरों को रुलाकर बरवाद् करना चाहती हो ? आज से कान पकड़ लो। देखो, "जो व्यक्ति सदा हँसमुख रहता है, उसका स्वास्थ्य दूसरे मुहर्रमी सूरतवालों से विशेष अच्छा रहता है।" यह सिद्धान्त महापुरुषों का है। मैं बहुत दिनों से यह अनुभव कर रही हूँ कि आखिर इस संसार में

इतना अधिक दुःख क्यों है। क्या हम अपने दुःखरूपी झगड़ों को सुखमय नहीं बना सकते! अवश्य बना सकते हैं और ये केवल हमारी कमज़ोरी ही से रस्सी के साँप बनकर डसते हैं। केवल साहस और शान्ति के अस्त्र-शस्त्रों की आवश्यकता है और सबसे अधिक आवश्यकता है आत्मबल, निर्भीकता और बेफ़िक्री की। थोड़ा इस विषय को सोचो तो! अवश्य मुर्दनी दूर हो जायगी। साधारण रूप से दुःख के समय मानव-स्वभाव का उज्ज्वल अंश भी नहीं देख पड़ता, इसीलिए सदैव प्रसन्नचित्त रहना और साथियों व दूसरों को भी प्रसन्नचित्त रखने के लिए हँसने-हँसाने के साधन उपस्थित करते रहना चाहिए। हमें इस जीवन में दार्शनिक, वैज्ञानिक, इतिहासकार वग़ैरह जितने मनुष्य भी मिले, सभी दूसरों को रुलाने और खुद रोते रहने से बहुत परेशान थे। इससे उनकी सद्भावनाएँ भी संकुचित रहती थीं। यदि वे 'हँसमुख' रहने के गुण को अपनाते तो कभी स्वास्थ्य-संबंधी ठेस न लगती और न उनकी आयु ही क्षीण होती। संसार में हँसमुखपन या ज़िन्दादिली से सभी कार्य शीघ्र सफल होते हैं। मेरा विश्वास है कि जीवन के प्रति गंभीर, प्रसन्नतापूर्ण और सदय दृष्टिकोण रखने से हम अपने समाज के लोकप्रिय सदस्य बन

सकेंगे। यह सचमुच मानवों के पारस्परिक व्यवहारों की वास्तविक कुंजी है।

यह कहा जा सकता है कि ऐसे भी लोग होते हैं जो ऊपर से उदार और हँसमुख देख पड़ते हैं, पर दिल के काले होते हैं। लेकिन मैं आपसे जिस प्रसन्नता की प्रार्थना करती हूँ, जो सहानुभूति देखना चाहती हूँ, जिस उदारता के ग्रहण करने को कहती हूँ, वह केवल दिखावटी न होनी चाहिए। मैं नहीं चाहती कि आप अथवा कोई भी अपने को उससे अच्छा दिखलाने का बहाना करें, जैसा कि हो। यदि आप केवल दिखावटी विनम्रता ग्रहण करेंगी तो उसका शीघ्र भंडाफोड़ हो जायगा। विनम्रता उस प्रेमपूर्ण और भले स्वभाव का पुष्परूपी आभूषण है, जो सारे संसार को कुटुम्ब समझता है। हमें यथार्थ उदार और निःस्वार्थ होना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर अपने को बलिदान करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए। यदि हम अपनी उदारता और सहानुभूति से अधिक से अधिक लाभ पहुँचाना चाहते हैं तो उनके लिए उपयुक्त गुणों की एक ठोस नींव होना ज़रूरी है। हमें अच्छे होने के साथ ही साथ सामाजिक होना चाहिए और अपने चारों ओर आनन्दमय वातावरण पैदा करना चाहिए, जिसमें दूसरों को हमारा जीवन अतिप्रिय मालूम हो।

विशेषकर शोक की अवस्था में और दुःखपूर्ण अवसरों पर हँसने से ही वास्तविक स्वास्थ्य का सौन्दर्य झलकने लगेगा और हम अपने शरीर को एक आदर्श और उत्तम साँचे में ढाल सकेंगी। सबसे अधिक लाभ हमारी आयु की वृद्धि भी है।

ज़रा-ज़रा-सी बातों पर मचलने, रूठने, रोने या झगड़ने से लाभ ही क्या होता है? ज़रा इसको भली भाँति सोचकर हँसमुख चेहरा बनाकर तो देखिए। कैसा आनन्द आता है!

तुम्हारी—सहेली

पत्र २

स्वास्थ्य और सौन्दर्य

सेढ़ बेलखेड़ी

२ मई, १९३३

प्रिय बहन !

सदैव प्रसन्न रहो, ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

आपका कल ही पत्र मिला। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि तुम केवल फ़ैशन की दीवानी बनकर अपने स्वास्थ्य को गड्ढे में ढकेलती जा रही हो। ज़रा अपने स्वास्थ्य को सुधारो, फिर कपड़ों की सजावट-बनावट पर लट्टू होना। भला, दिन दूनी रात चौगुनी मुटाई बढ़ते रहने पर कपड़ों का फिट होना कैसे संभव हो सकता है ? तुम्हीं क्या, सैकड़ों बहनों का शरीर आलस्य और लापरवाही से बेडौल और भद्दा हो जाता है। जब अपने हाथ से काम करने में अपमान समझकर नौकरों के द्वारा घर-गृहस्थी का काम कराया जाता है तभी तो हाज़मा बिगड़कर चर्बी छाती है। अपने हाथ से घर-

गृहस्थी का काम करने से कई लाभ होते हैं शरीर की कसरत हो जाती है, दास-दासियाँ भी सचेत होकर काम करती हैं। पतिदेव और घरवाले प्रसन्न रहते हैं, पैसे की बचत होती और काम ठीक समय पर अच्छे होते हैं। आप अपना प्रतिदिन का कार्यक्रम बनाकर निश्चित कर लें तो विशेष सफलता मिलेगी। उसमें घूमने व दिल-दिमाग को मस्त रखने को दैनिक समय रखिएगा। यह "टाइमटेबिल" की तख्ती अपने कमरे में लटका लीजिएगा और इसके ही अनुसार चलिएगा। अवश्य सुख प्राप्त होगा।

कपड़ा शरीर-रक्षा के लिए आवश्यक है, इसलिए रेशमी और विदेशी कपड़ों से ही सौन्दर्य नहीं बढ़ता। विलायती कपड़ों से मुझे तो बड़ी घृणा हो गई है; क्योंकि इनका सब रुपया विदेशों में जाता है, जिससे देश के आदमी बेकार और धनहीन बन रहे हैं। जब विलायतवाले हमारी भूमि में रहकर हमारे देश के जल-वायु और धन-धान्य से अपना पालन-पोषण करते हुए भी हमारे भाषा, वेश, भूषण, भाव और सभ्यता से प्रेम नहीं करते तो हम अपने घर में ही रहकर क्यों उनके रंग-ढंग के भक्त बनें ? देशी कपड़े भी हम साधारणतया पहनकर अपनी सभ्यता दिखला सकती हैं। फ़ैशन ऐसा करना चाहिए जिससे चार आदमी

हँसें नहीं और न अपने सत्य-धर्म पर आघात हो। सबसे पहले आर्थिक दशा के अनुसार काम करना चाहिए। जितनी लम्बी चादर हो, उतने ही पाँव फैलाने चाहिए। कुछ देहाती औरतें वही पुरानी परिपाटी के अनुसार ज़ेवर से अपने को लादती रहती हैं। इन ज़ेवरों की देश को अब बिलकुल आवश्यकता नहीं है। दूसरे देशों की महिलाएँ समय की बचत और स्वच्छता के लिए आदर्श काम करके सुविख्यात हो रही हैं। और हम उन्हीं दाकियानूसी गोरखधंधों में फँसकर अन्ध-विश्वास को अपनाये हुए हैं। मुटापा दूर करने की दवा तुम कई बार पूछ चुकी हो। इसका मुख्य उपाय मिहनत करना ही है। खूब डटकर परिश्रम किया करो, शीघ्र मोटापन दूर हो जायगा। सचमुच स्त्री-जाति के लिए बहुत मोटा होना लज्जा की बात है। लो, तुम्हारे आग्रह से एक दवा भी लिखे देती हूँ। प्रति दिन प्रातःकाल उठकर गर्म पानी में नींबू का रस डाल-कर पिया करो। थोड़े दिनों में लाभ होगा। हाज़मा ठीक न होने, पेट की खराबी, दिल की कमज़ोरी आदि से रंग बिगड़ जाता है। नारियल के गोले का मुँह खोलकर दो तोले केसर, छः कालीमिर्च, दो तोले खसखस और तीन माशे कस्तूरी उसमें भरकर मुँह बन्द कर दो। फिर छः सेर गौ के दूध में डालकर

पकाओ। जब सब दूध जल जाय, तब उस सबकी चने बराबर गोली बनाकर पान के साथ सुबह-शाम वह गोली खाओ। बाज़ारू दवा और इश्तहारी चीज़ों को छोड़ देना चाहिए। यदि किसी योग्य वैद्य व अनुभवी डाक्टर से परीक्षा कराकर औषधियों का सेवन किया जाय तो उत्तम है।

आजकल अनेक स्त्रियों के दाँत अक्सर ख़राब हो जाते हैं। बुरा भोजन, अधिक पान खाना, मांसाहारी चीज़ों का इस्तेमाल और ठीक तौर से सफ़ाई न करना, इन कारणों से दाँतों में पायोरिया हो जाता है। दोनों वक़्त शाम-सवेरे को दाँत साफ़ करना चाहिए। अगर दाँतों से रक्त गिरता हो तो ग्लास भर पानी में नमक डालकर कुल्ली करने से ख़ून बंद हो जाता है। मसूढ़े और दाँतों में भी नमक मलने से लाभ होता है। कुछ लोग पिसे कोयले में नमक मिलाकर मंजन करते हैं। नीम की दातून हलके हाथ से फेरने से कीटाणुओं का नाश होता है। नीम-टूथपेस्ट भी वही काम कर सकता है। दाँतों का सम्बन्ध आँखों से है। दाँत शरीर के विशेष द्वार हैं। इसलिए उनकी सफ़ाई पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। वर्ना मुख से दुर्गन्ध आने लगती है।

अपने शरीर के प्रत्येक अंग को नियमानुकूल आराम व स्वच्छता से रखना चाहिए। बालों के विषय में फिर

कभी लिखूँगी। हाँ, तुमने स्त्रियों का सच्चा सौन्दर्य पूछा है। "सच्चा सौन्दर्य" यह है, सुनो।

संसार आजकल तड़क-भड़क के पीछे पागल है। जिसे देखिए, वही सुन्दर बनने की चेष्टा में लगा है। विशेष करके स्त्रियाँ तो सौन्दर्योपार्जन करने के पीछे बिलकुल ही दीवाना हो रही हैं। फलस्वरूप हमें तरह-तरह के पोमेड, पाउडर, हेज़लीन, वैसलीन इत्यादि की भरमार बाज़ार में दिखाई देती है। भारत जैसे दरिद्र देश में करोड़ों रुपया इन बनावटी सौन्दर्यवर्द्धक वस्तुओं के लिए व्यय किया जाता है। परन्तु हमारे पिचके हुए गालों व बैठी और अन्दर धँसी हुई आँखों, झुके हुए कन्धों और पीले तथा निस्तेज चेहरों पर ये वस्तुएँ कोई प्रभाव नहीं डाल सकतीं। उल्टे पाउडर तो हमारे चेहरे में झुर्रियाँ डालकर उसकी और भी दुर्दशा करने का साधन बनता है। इस प्रकार हम सुन्दर बनने की लालसा के पीछे सुन्दर के बदले और भी असुन्दर बन जाती हैं।

सच पूछिए तो सुन्दरता पैदायशी हुआ करती है। यह एक ऐसा वरदान है, जिसके मिलने का स्थान माता की कोख है। वहीं पर बच्चे अपनी माताओं की इच्छा के अनुसार सुन्दर या असुन्दर बना करते हैं। किन्तु मा के पेट के बाहर भी बहुत-से ऐसे साधन हैं, जिनसे

सुन्दर मनुष्य असुन्दर तथा असुन्दर सुन्दर बन जाते हैं। सौन्दर्यहीन अथवा सुन्दर बनना मुख्यकर हमारे स्वास्थ्य पर निर्भर है। जो स्वस्थ है, वही सुन्दर है, जो अस्वस्थ है, वही असुन्दर। कितना ही सुन्दर मनुष्य क्यों न ो, यदि वह अस्वस्थ है तो उसका चेहरा पीला, कान्तिहीन और निस्तेज हो जाता है, वह कुरूप एवं बेढंगा दिखाई पड़ने लगता है। अतः सुन्दरता को स्थिर रखने के लिए उत्तम स्वास्थ्य की बड़ी भारी आवश्यकता है। स्वास्थ्य को उत्तम बनाने के बहुत से साधन हैं। परन्तु यदि उनमें से दो ही मुख्य बातों पर ध्यान दिया जाय तो हम अपने उद्देश में बहुत कुछ सफल हो सकते हैं। पहली बात है आहार-विहार का नियमित रूप से पालन और दूसरी शरीर के रग-पुट्ठों को सुदृढ़ रखने के लिए किसी न किसी प्रकार का व्यायाम करना। ये दोनों स्वास्थ्यरूपी गाड़ी के दो पहिये हैं, जिन पर हमारा सौन्दर्य, प्रतिष्ठा, सुख और जीवन अवलम्बित रहता है।

नियमित रूप में आहार न करने से मन्दाग्नि हो जाया करती है, जो कि नाना प्रकार के रोगों की जड़ है। राजयक्ष्मा, संग्रहणी, बवासीर और शूल आदि भयंकर रोगों के अतिरिक्त दाँतों के भयंकर रोग पायोरिया की भी यही जड़ है। जब पेट में भोजन सड़ता है तो ज़हरीली

गैसें भीतर से आ-आकर आँतों से टकराती हैं और इस तरह हमारे मसूढ़े सड़ने लगते हैं, और दाँत कमज़ोर हो जाते हैं। दाँतों के रोगी होने के और भी कई कारण हैं। चरपरे मसालों की भोजन में अधिकता, तम्बाकू का सेवन और दातून न करना उनमें से मुख्य हैं। प्राचीन काल में जब लोग दाँतों से खूब चबा-चबाकर सात्विक भोजन किया करते थे और नीम, बबूल अथवा मौलसिरी की ताज़ी-ताज़ी दतून करते थे, तब उन्हें टूथ-पाउडर, टूथ-ब्रश अथवा टूथ-वाश की ज़रूरत नहीं पड़ा करती थी। ब्रश और दतून की तुलना ही क्या? दतून करने में दाँतों को काफ़ी परिश्रम करना पड़ता है और उसकी छाल का रस दाँतों के लिए दवा का भी काम दे जाता है। ब्रश तो केवल दतून की भाँति दाँतों को झाड़ने तथा उनके ऊपर मंजन की भाँति पाउडर मलने भर का ही काम देता है। दतून जिस काम को पूरा करता है, ब्रश उसी को अधूरा छोड़ देता है।

स्वास्थ्य को स्थायी बनाने का दूसरा साधन है, व्यायाम। यों तो व्यायाम करने की सभी को आवश्यकता है, किन्तु उन स्त्री-पुरुषों को तो अवश्य ही व्यायाम करना चाहिए, जो अपने मस्तिष्क से अधिक काम लेते हैं; क्योंकि उनका मस्तिष्क एकाग्र होने के कारण उनके सारे शरीर का रक्त दिमाग़ ही की ओर

खिचा रहता है अत उनकी नस-नाड़ियों में अच्छी तरह रक्त का संचार नहीं हो पाता। इसी कारण वे बहुत निर्बल हो जाते हैं। उनकी आँतें धीरे-धीरे इतनी शक्तिहीन हो जाती हैं कि थोड़ा-सा भी अन्न नहीं पचा सकती। फलस्वरूप भाँति-भाँति की बीमारियाँ उनके शरीर में अपना घर बनाकर उन्हें निर्बल और कुरूप बना देती हैं। व्यायाम इन सब व्याधियों के लिए राम-बाण है। ईश्वर ने हमारा शरीर विचित्र ढंग का बनाया है और सब वस्तुएँ तो खर्च से घटती हैं, परन्तु जितना ही हम अपनी शक्ति को खर्च करते हैं, उससे काम लेते हैं, उतना ही वह बढ़ती है। पहले दिन हम किसी काम को कम कर पाते हैं, परन्तु धीरे-धीरे करते रहने से उसी काम को करने के लिए हमारी शक्ति बढ़ने लगती है, और थोड़े दिनों में हम उसी को बिना किसी प्रकार की थकावट का अनुभव किये करने लग जाते हैं।

व्यायाम से हमारे शरीर के केवल वही रग, पुट्ठे मज़-बूत नहीं होते, जिनसे काम लिया जाता है, वरन् हमारे शरीर के सारे अंग—जैसे हृदय, यकृत् और फेफड़े आदि भी पुष्ट होते हैं। मनन-शक्ति और शरीर में रस उत्पन्न करनेवाले अंग भी मज़बूत होते हैं। रक्त की गति बढ़ती है। भूख खुलकर लगती है। शरीर में

फुर्ती तथा चैतन्य का संचार होता है। रक्त शुद्ध होता है। थोड़े शब्दों में यह कहना चाहिए कि व्यायाम से शरीर के सभी अंग पुष्ट होते हैं और मनुष्य का स्वास्थ्य उत्तम हो जाता है। उसका मुख तेज और कान्ति से युक्त हो कुन्दन की तरह दमकने लगता है।

संसार में अनेक प्रकार के व्यायाम हैं। उनकी हज़ारों क़िस्में हैं। उनमें से दो-चार का भी वर्णन करना इस छोटे-से पत्र में असम्भव है। मनुष्य आवश्यकता के अनुसार अपने लिए स्वयं व्यायाम चुन सकते हैं। व्यायाम की मात्रा भी प्रत्येक व्यक्ति के लिए भिन्न-भिन्न होती है। बलाबल का विचार करके व्यायाम करने से ही लाभ होता है।

कहने का अभिप्राय यह कि स्वास्थ्य ही सौन्दर्य का जड़ है, और स्वास्थ्य की जड़ है नियमित रूप से आहार-विहार और व्यायाम करना। जो लोग इन बातों पर ध्यान देते हैं, वे स्वास्थ्य और सौन्दर्य जैसे अमूल्य वरदानों को प्राप्त करने में सफल होते हैं।

बस बहन, अब क्षमा करो। मुझे भोजन बनाना है वह आफ़िस से आते ही होंगे। मैं फिर लिखूँगी।

तुम्हारी—दर्शनाभिलाषिणी

पत्र ३

शरीर की रक्षा

सेंट्रल जेल, बेलखेड़ी

१० जून, १९३३

मेरी प्यारी बहन,

नमस्ते ।

मैंने कलकत्ते के मेडिकल एडवाइज़र बोर्ड की रिपोर्ट में पढ़ा है कि जीवन में "आदर्श जवानी" एक आनन्द और मुक्ति का द्वार है; क्योंकि जीवन की सब उमंगें और प्रसन्नता के मार्ग इसी समय में दृष्टिगोचर होते हैं। मनुष्य इसी जीवन में सब कुछ करने की इच्छा करता है। परन्तु दुर्भाग्यवश अधिकांश व्यक्ति अपनी इच्छाओं को भयानक बना लेते हैं, जिससे उनकी तरुण अवस्था आती और शीघ्र चली जाती है। अनेक बच्चों की तन्दुरुस्ती इतनी खराब देखी जाती है कि उसका भावी परिणाम पहले ही झलकने लगता है। उनको कुसंगति और प्रकृतिविरुद्ध कार्य करके अपनी दशा को बिगा-

खूते देखकर आश्चर्य होता है। उनकी आँखें धँसी, गाल पिचके, गालों पर झुर्रियाँ, नाक सूखी, मांस लटका व ढीला, नींद का न आना, स्मरणशक्ति का लोप, मन्द बुद्धि, दिनभर सुस्ती का आना, पाचनशक्ति की कमज़ोरी आदि से उमर की बाढ़ मारी जाती है। और शरीर का सौन्दर्य फीका पड़ जाता है। फिर धीरे-धीरे सभी बीमारियाँ घेर लेती हैं, जिससे उनके माता-पिता दुखी होकर अपनी सारी सम्पत्ति उनकी दवा-दारू में खर्च करके भी उनके स्वास्थ्य को फिर नहीं सुधार पाते। दूसरे देशों में देखिए! कैसे लम्बे-चौड़े, ताज़े, हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर और चुस्त जवान देख पड़ते हैं। इसका क्या कारण है? वे पचास वर्ष की अवस्था में भी जवानी के हौसले और मन की इच्छाओं का उपयोग करते हैं। परन्तु अभागे भारत में जवानी स्वप्नमात्र ही दीखती है। क्या ईश्वर ने अपनी देन में भेदभाव रक्खा है? नहीं! असल में बात यह है कि दूसरे देशवाले अपने विचार, नियम, कर्तव्य और सादगी से अपनी हरएक अवस्था का उपयोग करते हैं। हमारे देशवासियों में मूर्खता, लापरवाही, अन्धविश्वास ने गहरी नींव खोदकर एक अजब सुनहरी दीवार खड़ी कर दी है। आपको विदित होगा कि प्रकृति के नियमानुसार चलने से मानव-जीवन सफलता प्राप्त कर सकता है, और इसी आवश्यक

सिद्धान्त से हम अपना, अपनी संतति का तथा देश और जाति का सुधार करने में समर्थ हो सकते हैं।

सबसे प्रथम हमको स्वच्छता पर, जो स्वास्थ्य का मूलमंत्र है, लक्ष देकर इसका पूरा भेद जानना चाहिए कि तरुण अवस्था में हम कैसे जय पावें, अथवा शरीर को पुष्ट करने के लिए भोजन, पानी, हवा आदि की क्या आवश्यकता है? इनको यथोचित उपयोग में लाना, दूषित वायुमंडल से दूर रहना, सार्वजनिक कार्यों को ग्रहण करना, सेवार्थ धारणाएँ निश्चित करना आदि सत्कार्यों से हम अपने को विशेष प्रतिभाशाली और शरीर को सुन्दर तथा सुदृढ़ कर सकती हैं। शरीर के अवयवों का अनियमित उपयोग करने से जीवन दुखी हो जाता है, शरीर कुरूप होकर निस्तेज दिखता है। प्रकृति के नियमानुसार स्वतः शरीर बढ़ता और पुष्ट होता है और सभी अंग अपने-अपने काम करते रहते हैं। खून की भरमार से क्रोध, फुर्ती, मांस की वृद्धि, हाथ-पाँव का फड़कना आदि होने लगता है और चर्बी से साहस, पुष्टि, शोक, नई-नई इच्छाएँ, नींद का आना, चञ्चलता का प्रकट होना व सुन्दरता के विकास होने से स्वास्थ्य का धैर्य, विवेक, आत्मा का परिज्ञान झलकने लगता है। ये शरीर के शिक्षक हैं। इनमें से जिस व्यक्ति की जिस प्रकार की उन्नति

होने लगती है वैसा ही वह कार्य करने लगता है। परन्तु शरीर का मालिक विचार व आत्मा ही है। इनके सदुपयोग से तन्दुरुस्ती और खुशी दोनों प्राप्त होती हैं। हमारे जीवन को वे ही आदर्श और लोक-परलोक-हितकारी बना दे सकते हैं। संसार के धर्म-ग्रन्थों में ये ही सिद्धान्त महापुरुषों ने घोषित किये हैं। हमारी अज्ञान बहनें इधर ध्यान न देकर जवानी के जोश में क्षणिक सुख के लिए विवश होकर ऐसे कार्य करती हैं, जिनसे वे लँगड़ी, अन्धी, बहरी, कमज़ोर और अस्वस्थ होकर दुःखसागर के अशान्त भँवर में जा पड़ती हैं। यह तो विदित ही है कि खून की बढ़ती से, शरीर हृष्ट-पुष्ट, परिपक्व होने से और गर्मी बढ़ने से मासिकधर्म प्रारंभ हो जाता है, और फिर सांसारिक ज्ञान सङ्कोच व शर्म आने लगती है। परन्तु ये आवश्यक नियमों का उल्लंघन कर अपना और अपने देश व समाज का पतन कर डालती हैं। यदि आपकी दशा अच्छी रही, स्वच्छता और स्वास्थ्य पर पूर्ण ध्यान दिया और सदैव प्रसन्न रहना ठान लिया, तो सचमुच आप एक आदर्श वीर महिला बन जायँगी—जैसे महारानी लक्ष्मीबाई, अहल्याबाई, दुर्गावती, चाँदबीबी सुल्ताना, प्रो० ताराबाई इत्यादि।

कोई भी बहन ईश्वर की कृपा से वंचित नहीं है,

परन्तु थोड़ी सी लापरवाही और अज्ञान के अविचारों से अपने पैर पर आप कुल्हाड़ी मार लेता है। नसों की कमज़ोरी एक बुरी बीमारी है । अपनी असावधानी से भारी अनिष्ट हो जाता है । इससे मस्तिष्क कमज़ोर होकर पागल हो जाते हैं। इन नसों के बिगड़ने से मनुष्य सुस्त, बीमार और दुखी हो जाता है। यदि ऐसे ही समय में शरीर में कहीं फोड़ा-फुन्सी हो जाय या चोट लग जाय तो अच्छा होने में बहुत समय लगेगा ; क्योंकि फिर प्रकृति से सहायता कम मिलेगी। ऐसी दशा में विशेष सावधानी की आवश्यकता है । विशेषकर—

(१) स्वच्छ, ताज़ा, हलका भोजन करना चाहिए।

(२) मिहनत कम करना, चिन्ता न करना, कम जागना, क्रोध, ईर्षा आदि को भगा देना।

(३) समय का ठीक पालन करना और धीरज, प्रेम, शान्ति, प्रसन्नता में दत्तचित्त रहना।

(४) बीमारी के समय बुद्धिमान्, शुभचिन्तक, वैद्य, हकीम, डाक्टर, दाई आदि की योग्य सलाह लेकर इलाज करना।

(५) दुर्गन्धयुत हवा से बचना, छुआछूतवाले मर्ज़ों से दूर रहना, अपने भोजन, भूषण और घर को

स्वच्छ व हवादार रखना, भली भाँति सतर्क रहना, पानी उबाला हुआ पीना।

(६) बहनों को मासिकधर्म व प्रसव के समय विशेष सावधान रहना और प्रसूति व प्रदररोग को पास न फटकने देना चाहिए।

(७) थोड़ी बहुत कसरत अथवा हवाखोरी करना चाहिए।

(८) प्रातः ५ बजे उठना और सन्ध्या को १० बजे सो जाना चाहिए।

(९) किसी भी मादक द्रव्य का सेवन न करना चाहिए।

(१०) दाँत, आँख, कान, बाल, मुँह आदि की सफ़ाई का ध्यान सदैव रखना चाहिए।

(११) कभी बेकार न रहना चाहिए।

(१२) संगति भी अच्छों की करना चाहिए।

(१३) तन, मन, धन से किसी की बुराई अथवा अहित न करना चाहिए।

लो, अब तुम अपनी पड़ोसिनों व सहेलियों को सुधार का मौक़ा दो। बच्चों को बहुत-बहुत प्यार कहना

तुम्हारी......

पत्र ४

बालों की रक्षा

सेठ बेलखेड़ी

१७ जुलाई, १६३२

प्रिय बहन,

तुम पुष्पवाटिका की भाँति फूलती-फलती रहो।

बालों के विषय में आपने कई बार तक़ाज़े लगाये हैं। सचमुच, रूप के सौन्दर्य को सुन्दर लम्बे-लम्बे चिकने बालों की आवश्यकता है। प्रेम भी रूप का भिखारी है। फिर जहाँ रूप नहीं, वहाँ प्रेम भी नहीं हो सकता। कमर से नीचे लटकते हुए बाल, लम्बी हिरन की सी आँख, रूप को सौगुना बढ़ाकर प्रेम को ज़बरन् घसीट लेते हैं। मनुष्य सौंदर्योपासक है। इससे जीवन का आनन्द, हृदय की शांति, आत्मा का विकास होता है। स्त्री का रंग-रूप चाहे कैसा ही दिलफ़रेब हो, उसका चमड़ा भी संगमरमर की मूर्ति के अनुसार हो, चाहे वह सुन्दरता में स्वर्गीय अप्सरा हो, तो भी यदि उसके बाल घने कमर से नीचे

नहीं लटकते, तो वह मनमोहिनी व पद्मिनी नहीं कही जा सकती। स्त्री का रूप लम्बे-लम्बे काले बालों पर ही निर्भर है, और यही स्त्रियों का ताज है। कवियों ने उन्हें ही वास्तविक सौन्दर्यवती माना है, जिनके बाल काले-काले खूब घने लम्बे रहते हैं। संसार की जिन स्त्रियों का जीवन-चरित्र विदित है, उनके बाल ऐसे ही रहे हैं। जब कोई लम्बे बालोंवाली स्त्री नज़र आती है, तो शिक्षित स्त्रियाँ ईर्षा के साथ कहती हैं कि ऐसे बाल हमारे न हुए। वैज्ञानिक कहते हैं कि यह शरीर हड्डियों का पंजर है, जिससे मांस चिपका है। इसके ऊपर चमड़ा है, इसी से बाल निकलते हैं, इनका पोषण खून से होता है, जो सैकड़ों नसों के द्वारा इधर-उधर दौड़ा करता है। खून के प्रभाव से ही बालों पर असर पड़ता है। निर्विकार खून जब तक भली भाँति दौड़ता रहेगा, तब तक बालों को कोई शिकायत न रहेगी। जब खून दूषित और विकारी होकर कमज़ोरी प्रकट करता है, तभी बालों की बाढ़ रुक जाती है। पुरुषों के बाल साल में ६-७ इंच, और स्त्रियों के अधिक से अधिक ४० इंच तक बढ़ सकते हैं। औषध व वैज्ञानिक ढंग से विदेशों में आज बड़ी उन्नति हो रही है। परन्तु स्वाभाविक शैली अति उत्तम होती है। बाज़ारी तेल, साबुन से लाभ न होकर हानि होती है। इससे कम उमर के

बच्चों के सफ़ेद बाल हो जाते हैं। जितने भड़कीले तेल बनाये जाते हैं, वे सफ़ेद घासलेट तेल के ऊपर एसेंस मिलाकर बनाते हैं, जिससे बालों में खुजली और कई मर्ज़ पैदा हो जाते, और फिर सफ़ेद होने लगते हैं। सिर के सवा लाख बालों की पौष्टिक ख़ूराक शुद्ध तेल ही होता है। कुछ लोग आँवले के तेल की तारीफ़ करते हैं, किन्तु जब शुद्ध मिले, तभी लाभ होता है। घर में मसाले आदि का तेल बनाना सबसे उत्तम है। खराब तेल और बाज़ारी तड़क-भड़कदार चीज़ों से सावधान रहना चाहिए। सिर में मिट्टी डालने से भी नुक़सान होता है।

योरप में बालों के लिए विशाल हेयर ड्रेसिंगभवन प्रायः प्रत्येक छोटे-बड़े नगरों में पाये जाते हैं। वहाँ पर स्त्री और पुरुष मशीनों की सहायता से अपने बालों को यथाइच्छा बनवा लेते हैं। जिसके बाल घुँघराले नहीं होते, वह भी घुँघराले बालों के सौन्दर्य का आनन्द उठा सकता है। बीसवीं सदी के इस मशीन युग में प्रायः सभी चीज़ें लभ्य हैं। परन्तु यह सजावट तो रही बाहरी। आन्तरिक स्वास्थ्य, जो शरीर के ऊपरी भाग को सौन्दर्य प्रदान करता है, उसके लिए तो ये मशीनें किसी प्रकार लाभदायक नहीं हो सकतीं। रसायन-शास्त्र द्वारा तैयार की गई उत्तम से उत्तम औषध भी क्या आपके बालों के उड़ने को रोक सकती है, यदि

आप उन्हें प्रतिदिन स्वच्छ जल से स्नान न करावें, या स्वच्छ वायु और धूप का सेवन न करावें। योरप की स्त्रियाँ सप्ताह में एक बार या कभी-कभी दो-दो सप्ताह में एक बार अपने बाल बड़ी-बड़ी दूकानों में जाकर धुलवा और बनवा आती हैं। घर आकर वे प्रतिदिन हाथ-मुँह धो या नहा भी लेती हैं, परन्तु बालों की सजावट या उनकी लहर कड़ेपन में नर्मी आ जाने के भय से वे बालों को नहीं धोतीं। वे इतना नहीं समझतीं कि प्रतिदिन दो या कम से कम एक बार बालों को अच्छे साबुन से धोकर सुखा डालने से बालों के सौन्दर्य में वृद्धि ही होती है, कमी नहीं। उन्हें यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि यदि उनके बालों को रक्त उचित भोजन न दे सका, तो सौन्दर्य-नगरी पैरिस—जहाँ शरीर की प्रत्येक वस्तु के लिए वैज्ञानिक भवन खुले हुए हैं—की बड़ी से बड़ी दुकान भी उनके बालों की रुखाई को दूर नहीं कर सकती!

अमेरिका के कुछ वैज्ञानिकों का कथन है कि जैतून या बादाम के तेल का प्रयोग सिर की चमड़ी और बालों की जड़ों के लिए बहुत ही उपयोगी है। उनके कथनानुसार कैस्ट्रायल का यदि प्रयोग किया जाय, तो सर्वोत्तम, इन तीन तेलों को मिलाकर काम में लाने से भी आश्चर्यजनक लाभ होता है। इसके अतिरिक्त यदि प्रातः और रात को सोते समय नीबू का रस पानी में

मिलाकर उससे बाल धो डाले जायँ तो कुछ ही दिनों में उनमें एक सौन्दर्यमयी चमक और नरमी आ जाती है। उक्त सब बातें ऊपरी लेप की हैं, परन्तु इसके साथ हमें यह कभी भी नहीं भूल जाना चाहिए कि अस्वस्थ और दूषित शरीर हमारी इन सब बाह्य परवाहों के बावजूद भी हमारे केशों को सुन्दर न होने देगा। बाह्य-लेप भी रक्त में बालों का भोजन पहुँचाते हैं; परन्तु वे कभी भी उतना भोजन नहीं पहुँचा सकते, जितना कि बालों के लिए आवश्यक है। इसलिए प्राकृतिक गुणों पर मोहित होना चाहिए। अपने पतिदेव को भी भारतीय सभ्यता की चाट लगा दो, तब ही तो तुम्हारी खूबी है। शेष शुभ।

आपकी—सहेली

पत्र ५

नेत्ररक्षा

सेंट वेलखेड़ी

२९ अगस्त, १९३२

प्यारी बहन-

सलाम।

आपका कृपापत्र देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। कल ही नन्हें भैया ने कहा था कि बिटिया रेवती की आँखें दिन-दिन खराब होती जा रही हैं। मुझे यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि तुम-सरीखी पढ़ी-लिखी श्रीमती अपनी इकलौती कन्या के स्वास्थ्य की ओर से किस तरह असावधान हो। बहन! सौन्दर्य का सारा रहस्य आँखों में ही छिपा हुआ है। मनुष्य के हृदय के भाव आँखों द्वारा साफ़-साफ़ जाने जा सकते हैं। आँखों से ही संसार की प्रत्येक वस्तु का ज्ञान होता है। शरीर के सारे अङ्ग-प्रत्यङ्गों में आँख ही सर्वश्रेष्ठ है। "आँख हैं तो जग है" नेत्र-हीन व्यक्ति का जीवन भारस्वरूप हो जाता है। उसका जीना न जीना

बराबर है। प्रेम, लज्जा और शील का स्थान भी आँखों में ही है। स्त्रियों के नेत्रों की विशेषता में तो सैकड़ों ग्रन्थ मिल जायँगे। कबीर ही कहते हैं—

नारि-नयन के पड़त ही, अंधा होत भुजङ्ग।
वे बपुरे! कैसे जियें, नित नारी को सङ्ग॥

प्रायः "मृगनयनी", "बिजली" आदि के उदाहरण सैकड़ों भरे पड़े हैं। उर्दू कवियों ने तो तीर, तलवार, और न मालूम क्या-क्या बनाकर कमाल ही कर दिया है। बिहारी ने ही देखो! क्या कहा है?

अमिय, हलाहल, मदभरे, श्वेत, श्याम, रतनार।
जियत, मरत, झुकि-झुकि परत, जिहि चितवत इक बार॥

इसी तरह कई भव्य पुरुषों ने जितना मान और महत्त्व आँखों को दिया है, उतना दूसरे अङ्ग को नहीं दिया है। नेत्रों की सदैव नरगिस व कमल के पुष्पों से उपमा दी जाती है। चमकीली, लज्जाभरी, शर्मीली आँखें, देखनेवालों के चित्त को अनायास अपनी ओर खींच लेती हैं, इसलिए इनकी रक्षा जीजान से प्रत्येक मनुष्य को करनी चाहिए। आँखों को निर्मल, स्वच्छ एवं सौन्दर्यपूर्ण रखने के लिए सबसे पहले यह कर्तव्य होना चाहिए कि ऋतु-परिवर्तन, अपूर्ण निद्रा, गर्दग़ुबार, धूप तथा अधिक परिश्रम से इन्हें

बचाया जाय। बहुत तेज और चमकीली वस्तु की ओर देर तक और टकटकी बाँधकर न देखा जाय। बहुत ज़ोर से हिलती हुई चीज़ों पर दृष्टि स्थिर न की जाय। कम रोशनी में और महीन अक्षरों की कोई पुस्तक न पढ़ी जाय। आँखों पर बहुत जोर न डाला जाय, अन्यथा वे निर्बल और निस्तेज हो जायेंगी, उनकी स्वाभाविक शक्ति में हीनता खटकने लगेगी, और नानाप्रकार के रोग उत्पन्न होकर उनका सारा सौन्दर्य नष्ट हो जायगा। अक्सर कुछ बहनें सोकर उठते ही घर के कामधंधे में लग जाती हैं, और घंटे दो घंटे बाद झाड़ू-बुहारी के पश्चात् शौच आदि करके बासी-तिबासी नाश्ते को खाती हैं। कई तो नहाते वक़्त भी नेत्रों को धोने का ध्यान नहीं रखतीं। सोकर उठने पर कई बार शीतल जल से छींटे मारना चाहिए, इससे गर्मी निकल जाती है और ज्योति बढ़ती है। नेत्र-पीड़ा और सिर-दर्द नहीं होता। सबसे उत्तम तो गहरे जल में स्नान करने से विशेष लाभ होता है। नेत्रों का सफ़ेद, तेज, स्वच्छ, चमकीला होना स्वास्थ्य के लिए सन्तोषप्रद है। अच्छे स्वास्थ्य का प्रभाव नेत्रों की सुन्दरता पर भी पड़ता है। जो सत्यभक्त, सदाचारी, परोपकारी, शुद्ध हृदय का होता है, उसके नेत्र भी अच्छे होते हैं। नेत्रों में स्वाभाविक लज्जा और

शील तथा कोमलता होना सौन्दर्य को बढ़ाता है। यह आत्मा की खिड़की, और शरीर के अवयवों के संगठन का आयना है। आँखों को नीरोग और निर्मल तथा तेजपूर्ण बनाये रखने के लिए नीचे लिखे उपक्रम लाभदायक सिद्ध होंगे—

(१) किसी दूर की वस्तु पर अपनी दृष्टि स्थिर करो। कुछ देर तक टकटकी बाँधकर उसे देखो, फिर ज़ोरों से अपनी आँखें बंद कर लो। ऐसा कई बार करो।

(२) आँखों को जल्द खोलना और जल्द बन्द करना सीखो। सूर्य की ओर खड़े होकर हाथ से आँखें बंदकरके देखो, फिर खोलो। ऐसा कई बार करो।

(३) नेत्रों की कसरत करो। नीचे, ऊपर, दायें, बायें पुतलियों को घुमाओ।

(४) नेत्रों के चारों ओर की त्वचा को धीरे-धीरे ऊपर को उठाओ। आँखों पर हथेलियाँ रखकर उन्हें दबाओ और हथेलियों को घुमाओ।

(५) खान-पान की सादगी रक्खो और फल अधिक खाओ। विशेषकर गाजर खाने से लाभ अधिक होता है। कुछ लोग इसीलिए गाजर का हलुआ खाते हैं। जिनकी आँखें आई हों, उन्हें चाहिए कि एक पोटली छोटी सी इस तरह बनाकर निचोड़ो। फ़ौरन् आराम हो जाता है।

दो गिरह सफ़ेद साफ़ कपड़ा हल्दी में रँगकर थोड़े से नीम के पत्ते, सेंदुर, फिटकरी आधी कच्ची आधी भुनी हुई, अफ़ीम, आदि मिलाकर पोटली बना लें और उपयोग में लावें। अक्सर गर्म, बादी चीज़ों के खाने से व नशा करने से आँखें धीरे-धीरे खराब हो जाती हैं। अधिक मिर्चा खाने से भी नुक़सान होता है। आँखों में ताज़ी नारंगी का अर्क़ डालने, गुलाबजल और हर्र बहेड़ा आँवले के जल से धोने, फुलाई फिटकरी सुबह-शाम आँखों में डालने, सवेरे बिना मुँह धोये अपने थूक से आँखें मलने और शुद्ध शहद आँजने आदि से आँखों को लाभ पहुँचता है। गाय के कच्चे दूध में कपड़ा तरकर फिटकरी भून के, अफ़ीम का पानी भी मिला दे। उक्त औषधि बीमार आँखों के लिए लाभदायक है। भोजन के पहले मुँह, हाथ-पाँव धोओ, और भोजन के बाद भी धोकर सिर में कंघी करो। इससे लाभ होता है। बाईं दाढ़ से दतून चबाने से भी लाभ होता है। दाँत और आँख का गहरा सम्बन्ध है। इसलिए दाँतों की सफ़ाई का ध्यान भी काफ़ी रखना चाहिए। लो बहन, अब बिटिया को लाभ पहुँचाकर लिखो कि कितना सरल मार्ग मिल गया है। कल मैं साईखेड़ा (पतिगृह) जा रही हूँ, अब वहीं से लिखूँगी।

तुम्हारी ही सहेली

पत्र ६

स्वतंत्रता

साईंखेड़ा

१० नवम्बर, १९११

प्यारी बहन,

आदाब।

मैंने जब से तुम्हारा दुःखपूर्ण पत्र पढ़ा है, बड़ी बेचैन हूँ। क्या करूँ? तुमने अपने ही हाथ से आप कुल्हाड़ी मारी है। बचपन में मँगनी कर देने और लड़कियों से उनके विवाह के सम्बन्ध में उनकी सम्मति न लेने से कैसे शोचनीय परिणाम निकलते हैं। हा! ऐसा करने से अबलाओं पर कैसा घोर अत्याचार होता है! उन्हें सारी उमर कैसे-कैसे असह्य कष्ट भोगने पड़ते हैं। लड़के और लड़की का जीवन किस प्रकार रूखा, आनन्द-विरहित हो जाता है और अन्त में इस बुरी प्रथा से कितने ही सुन्दर फूल खिलने से पहले ही कुम्हलाकर गिर पड़ते, और ख़ाक में मिल जाते हैं। इससे समाज की कितनी क्षति होती है,

इस पर किसी ने ध्यान दिया है? जब तुच्छ से तुच्छ, ऐसी छोटी वस्तु लेने के लिए हम दस दूकानें देखकर खरीदते हैं, चाहे वह वस्तु आधे घंटे ही काम देती हो, तब इससे अधिक शोक की क्या बात हो सकती है कि जिसके साथ लड़की को सारा जीवन व्यतीत करना हो, भली बुरी हर दशा में जिसका साथ देने पर वह बाध्य हो, जिसे छोड़ देने और जिससे मुँह मोड़ लेने का किसी समय और किसी दशा में भी उसे अधिकार न हो, जिसकी वह अर्द्धाङ्गिनी कहलावे और जिससे उसे यमदूत के अतिरिक्त और कोई जुदा करने की शक्ति न रखता हो, उसी के चुनाव में बेचारी बेज़बान लड़की अपनी सम्मति तक प्रकट करने के अधिकार से भी वञ्चित हो? माता-पिता अथवा अभिभावक जिसे चाहें गैया की रस्सी की भाँति उसका हाथ पकड़ा दें।

भाग्य अच्छा हुआ तो जोड़ी मिल गई, जीवन आनन्द-पूर्वक व्यतीत हो गया। यदि दिल न मिला तो दम्पति का, नहीं तो कम से कम पत्नी का जीवन तो नष्टप्राय आनन्दविहीन हो गया। बेचारी जीवन भर ठंडी आहें भर, जल से बाहर मछली की भाँति पड़ी तड़पा करेगी। जो उसके जी पर बीतती है, वही समझती है। माता-पिता क्या जानें। मर्दों का तो कोई पल्ला पकड़ता नहीं, वे चाहे जो करें। एक स्त्री के घर में होते दूसरी ब्याह

लावें, अथवा अन्य कुत्सित कर्म करने लग जायँ। इससे बढ़कर अनर्थ और अत्याचार क्या होगा! फिर कोई कारण नहीं कि युवा लड़कियों, स्त्रियों को अपने इस जीवन-मरण की महती समस्या में अपनी सम्मति के प्रकाश करने का पूर्ण अधिकार क्यों न दिया जाय ?

तुम्हारी ननद के वाक्यों से मुझे आश्चर्य हुआ। बहन, भारत को मैं एकदम न तो स्वर्ग में भेजना चाहती हूँ, और न रसातल में। जिस लोक में हम-तुम हैं, उसी में रहने की सजीवता लाना है। एक अंग्रेज़ विद्वान् ने लिखा है—

"A moral revolution has already begun, Anthropologists like Fraser have robbed morality of its divine sanction, psychologists like Havelock Ellis have shown that it is often contrary to the interest of man, and lastly novelists like D. H. Lawrence have thundered against it to a larger public."

अर्थात् सारे नियमों को धता बताना अच्छा नहीं है, परन्तु कट्टरपन और अन्धविश्वास का समर्थन भी नहीं किया जा सकता। हम स्त्रियों के सम्बन्ध में जिन खूसट पुरुषों की जेब गरम होती है, असल में वे ही अड़ंगे लगा रहे हैं। यदि हम वास्तविक अपना सुधार करना

चाहती हैं तो हमें दृढ़ता के साथ अपने अधिकारों के लिए जंग करने को उतर पड़ना चाहिए। फिर आप ही आप सुख-शान्ति का दरवाज़ा खुल जायगा और हमारी अच्छाइयों के सभी गुणग्राहक होकर अपना मस्तक झुकावेंगे। अब रसोई बनाने का समय हो रहा है, इसलिए क्षमा करना। फिर लिखूँगी। तुम्हारी ननद को प्यार कहना।

तुम्हारी—सहेली

पत्र ७

प्रेम

साइँखेड़ा

२९ दिसम्बर, १९३२

प्रिय बहन,

सप्रेम तस्लीम ।

प्रेमी प्रेमी के होते हैं, हृदय, विचार समान ।
एक दूसरे मन की बातें, झट लेते हैं जान ॥

प्रेम ! मानव-जाति का भूषण है, लोक-परलोक का कल्याणकारी पथ है, जीवन का मुक्तिदाता अस्त्र है, और इच्छित आशाओं का सरल साधन है। वास्तविक में,

Love is god and god is love

"प्रेम ही ईश्वर है और ईश्वर ही प्रेम है।"

जिस प्रेम के लिए लोग तरह-तरह की उपासना करते हैं, जिस प्रेम के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर अपने प्रेमी के मिलने के लिए खाक में मिल जाते हैं, जिस प्रेम से क़ैस मजनूँ बनकर संसार में एक आदर्श पवित्र धारा बहा चुका है, जिस प्रेम से स्वामी विवेकानंद, स्वामी

रामतीर्थ, "अहं ब्रह्मास्मि" पद को लेकर अपने यश की पताका गाड़ गये हैं, जिस प्रेम का डंका कबीर ने बजाया, जिस प्रेम की प्रेरणा से दुर्गावती, लक्ष्मीबाई और सुलताना चाँदबीबी ने रणचंडी की आराधना की, जिस प्रेम के बल पर ध्रुव और प्रह्लाद ने विजय-दुन्दुभी बजाई, जिस प्रेम से धर्म-पिपासुओं ने ईश्वर के दर्शन किये, उसी प्रेम (इश्क़) को साधारण व्यक्ति बदनाम करते हैं। संसार में सफलता प्राप्त करने के लिए प्रेम का अटल भक्त होना पड़ता है और प्रेम सरीखे पवित्र मंत्र को जपना पड़ता है। उसी प्रेम से डरना, और उसे हौआ समझना कितना बड़ा कायरपन है? जिस तरह मर्द लोग प्रेमपथ पर चलने के लिए कई मौलिक अनुसंधान करते हैं, उसी भाँति स्त्री-समाज को भी प्रेम करने का अधिकार है। सभ्य समाज को चाहिए कि कन्याओं को स्वतंत्रता दे, उनके मार्ग में बाधा न खड़ी करे। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने अ० भा० स्त्री-सभा, कराँची में घोषणा की थी कि होशियार लड़कियों को पिंजरे के भीतर रखना शोभा नहीं देता? वे पिपरमेन्ट का सत या कच्चा धागा नहीं हैं। यदि उन्हें अपने पैरों पर खड़ा किया जाय, तो वे भी संसार के रवैये को देखकर अपना भावी जीवन सुखमय बना सकेंगी। फिर कभी स्त्री-समाज की हीनता पर आँसू न बहाने पड़ेंगे; क्योंकि

वे स्वयं स्वार्थी, धनलोलुप अभिभावकों की परीक्षा कर लेंगी। वे हर्गिज किसी की चालों मे न आवेंगी।

उनका जीवन कंटकाकीर्ण न रहेगा; उन्हें पतित होने और आत्महत्या का मौक़ा ही न मिलेगा। परंतु मेरा ध्येय यह नहीं कि पश्चिमी सभ्यता के अनुसार हम भारतीय बहनों को पूरी स्वच्छन्दता से रहना चाहिए। हम सत्य, धर्म और गंभीरता के विचारों में प्रवेश करें और प्रत्येक दशा में पवित्र प्रेम को वासनाओं से रहित कर भव्यभाव से कार्य करें, तो जीवन-यात्रा में विजय मिल सकती है। मान लो, हमारे कुटुम्बी, कठोर, उग्र स्वभाव के भोंदू हैं तो भी हम उन्हें धीरज के साथ अपनी प्रेमभक्ति द्वारा सुधार सकती हैं। बहादुरी इसी में है कि हम बुरों को सुधारें। प्रेम दिखावटी नखरों से और मोल करने से प्राप्त नहीं हो सकता। न हम सच्चे प्रेम को मार-पीट और लोभ-भय से दूर कर सकती हैं। वह तो स्वाभाविक रूप में आत्मा के साथ रहता है। प्रेम के पुजारी, प्रेम के भिखारी और प्रेमीगण महान् योद्धा होते हैं। इसलिए आप अपने विरोधियों को सुधारने के लिए प्रेम का भजन शुरू कर दो। सारे संकट मिट जायँगे। शेष फिर.

तुम्हारी—सहेली

पत्र ८

वरसम्बन्धी विचार

साईंखेड़ा

९ जनवरी, १९३४

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। कुछ प्रसन्नता हुई और कुछ आश्चर्य ! क्या तुम भी पुराने ढकोसलों में फँसकर नाई-पुरोहितों के द्वारा वर की खोज कराने के लिए उतावली हो रही हो? वर्तमान समय के वायुमण्डल को देख-सुनकर मैं यह स्पष्ट प्रकट करूँगी, कि अब स्त्रीजाति को इस सम्बन्ध में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करनी चाहिए। जब तक हम लोग अपने पैरों पर खड़ी न होंगी तब तक दम्पति-जीवन भी सुखदायी न होगा। अपनी शिक्षा-समाप्ति के पश्चात्, देश समाज धर्म की आज्ञानुसार पूर्ण वय प्राप्त कर कन्याओं को दम्पति बनने के लिए अपने जीवन-संगी का चुनाव स्वयं करना चाहिए। सम्बन्ध करने के पहले अपने होनहार पति के विषय में पूर्ण जाँच-पड़ताल भी कर लेना सर्वोत्तम है। कई मनचले युवक शिक्षित युवती से सम्बन्ध करने के लिए लालायित रहते हैं।

वे ऐसी कन्याओं से सदैव कुसमय पर ही मिलते हैं। ऐसी विकट परिस्थिति में कन्याओं को विशेष सावधान होकर साफ़ मन से, शान्ति और सत्यता का व्यवहार करना चाहिए। किसी भी प्रकार से, प्रेम और आर्थिक हीनता आदि उनके सामने प्रकट न करना चाहिए। यदि वे परख करना चाहती हैं, तो साहस करके बुद्धि-विद्या-बल से करें; परन्तु उतावलापन न आने पावे, और न उन युवकों को यह ज्ञान ही हो कि ये हमारी परीक्षा कर रही हैं। शीघ्र चापलूसी या किसी आवेग से एकदम अपना हृदय नहीं दे देना चाहिए, नहीं तो जीवन भयानक पतित हो जाता है। कहा है—

बिना विचारे जो करे, सो पीछे पछिताय।
काम बिगारे आपनो, जग में होत हँसाय॥

अक्सर कुछ नवयुवतियाँ थोड़े-से दिखावटी प्रेम और खुशामद के सब्ज़बाग़ पर लट्टू हो जाती हैं। यह बड़ी दुःखद घटना है। इससे शरीर, आत्मा और भावी सुधार का नाश होकर जीवन जर्जर हो जाता है। और फिर जन्म भर को दुःखसागर में फँसकर तड़पना पड़ता है। जब तक हम स्वयं अथवा अपने हितैषियों द्वारा जीवन-साथी (पति) का चुनाव करने के लिए आगे न बढ़ेंगी, तब तक हमारा सांसारिक दम्पति-जीवन हरा-भरा नहीं हो सकेगा। प्रेम वह वस्तु है, जो बुरी दशा में भी साथ दे

पत्र ६

विवाह

माइखेड़ा

५ फरवरी, १६२४

प्रिय बहन,

नमस्ते।

तुमको न मालूम कौन-सी खब्त सवार हुई है, जो तुम मुझे सैकड़ों ऊल-जलूल बातें लिख-लिखकर परेशान करती रहती हो। लो भई, विवाह के ऊपर ही मैं कुछ लिखे देती हूँ। विवाह से घर, और घर से समाज की सृष्टि होती है। अतएव समाज की नींव विवाह है, और विवाह-पद्धति देखकर समाज का ढाँचा बहुत कुछ मालूम किया जा सकता है। यही कारण है कि प्राचीन या अर्वाचीन, पूर्वी या पश्चिमी जितने भी पण्डितों ने समाज-शास्त्र पर विचार किया है, उन्होंने सबसे पहले विवाह के ही प्रश्न को लिया है। अध्यात्म और नीति-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित लोकमान्य

और सदा निवाह करे। यह स्मरण रहे, कि कई मनचले युवक, "मनोविनोद के लिए ही" सुन्दर, सुशील, गुण-सम्पन्न नवयुवतियों को भ्रष्ट करने के साधन दिखावटी सेवा, लोभ, बड़ाई द्वारा प्रेम की बड़ी-बड़ी डींगें मारते रहते हैं। इससे आदर्श बन्धन की जड़ खोखली होकर अतिशय विनाश होता है, अतएव स्त्री-समाज को अपने इस आवश्यक कार्य की महत्ता और सुधार के लिए सावधान रहना चाहिए। मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि कन्याएँ अपने कुटुम्बी व अभिभावकों को बलाए ताक़ रखकर अनैतिक मार्गों से वर के चुनाव में भाग लिया करें। चूँकि हमारे देश में प्राचीन काल में 'स्वयम्बर' होता था, परन्तु अब समय यह बतलाता है कि हम नाई-पुरोहितों की बातों पर या कुछ स्वार्थियों के जाल में ही फँसकर अपना नुक़सान न करती रहें। सखी, तुम अब दुनिया भर के सुधारों का ठेका मुझे ही न दिया करो। कुछ तुम भी तो सोचा करो। मेरी चिट्ठियों का पोथा बनाकर क्या करोगी? भला, ऐसा मज़ाक़ क्यों करती हो? मेरी चिट्ठियों को कमरे में चित्र की तरह रखने से अथवा लगाने से क्या लाभ होगा? देशभक्त वीराङ्गनाओं के सिद्धान्त से कमरा सजाया करो। शेष फिर।

आपकी—सहेली

पत्र ९

विवाह

साईंखेड़ा

९ फरवरी, १९२४

प्रिय बहन,

नमस्ते।

तुमको न मालूम कौन-सी खब्त सवार हुई है, जो तुम मुझे सैकड़ों ऊल-जलूल बातें लिख-लिखकर परेशान करती रहती हो। लो भई, विवाह के ऊपर ही मैं कुछ लिखे देती हूँ। विवाह से घर, और घर से समाज की सृष्टि होती है। अतएव समाज की नींव विवाह है, और विवाह-पद्धति देखकर समाज का ढाँचा बहुत कुछ मालूम किया जा सकता है। यही कारण है कि प्राचीन या अर्वाचीन, पूर्वी या पश्चिमी जितने भी पण्डितों ने समाज-शास्त्र पर विचार किया है, उन्होंने सबसे पहले विवाह के ही प्रश्न को लिया है। अध्यात्म और नीति-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित लोकमान्य



थी। इस पर किसी ने ध्यान दिया है? जब तुच्छ से तुच्छ, [illegible] वस्तु लेने के लिए हम दस दूकानें देखकर खरीदते हैं, चाहे वह वस्तु आधे घंटे ही काम देती हो, तब इससे अधिक शोक की क्या बात हो सकती है कि जिसके साथ लड़की को सारा जीवन व्यतीत करना हो, भली बुरी हर दशा में जिसका साथ देने पर वह बाध्य हो, जिसे छोड़ देने और जिससे मुँह मोड़ लेने का किसी समय और किसी दशा में भी उसे अधिकार न हो, जिसकी वह अर्द्धाङ्गिनी कहलावे और जिससे उसे यमदूत के अतिरिक्त और कोई जुदा करने की शक्ति न रखता हो, उसी के चुनाव में बेचारी बेज़बान लड़की अपनी सम्मति तक प्रकट करने के अधिकार से भी वञ्चित हो? माता-पिता अथवा अभिभावक जिसे चाहें गैया की रस्सी की भाँति उसका हाथ पकड़ा दें।

भाग्य अच्छा हुआ तो जोड़ी मिल गई, जीवन आनन्द-पूर्वक व्यतीत हो गया। यदि दिल न मिला तो दम्पति का, नहीं तो कम से कम पत्नी का जीवन तो नष्टप्राय आनन्दविहीन हो गया। बेचारी जीवन भर ठंडी आहें भर, जल से बाहर मछली की भाँति पड़ी तड़पा करेगी। जो उसके जी पर बीतती है, वही समझती है। माता-पिता क्या जानें। मर्दों का तो कोई पल्ला पकड़ता नहीं, वे चाहे जो करें। एक स्त्री के घर में होते दूसरी व्याह

लावें, अथवा अन्य कुत्सित कर्म करने लग जायँ। इससे बढ़कर अनर्थ और अत्याचार क्या होगा। फिर कोई कारण नहीं कि युवा लड़कियों, स्त्रियों को अपने इस जीवन-मरण की महती समस्या में अपनी सम्मति के प्रकाश करने का पूर्ण अधिकार क्यों न दिया जाय ?

तुम्हारी ननद के वाक्यों से मुझे आश्चर्य हुआ। बहन, भारत को मैं एकदम न तो स्वर्ग में भेजना चाहती हूँ, और न रसातल मे। जिस लोक में हम-तुम हैं, उसी मे रहने की सजीवता लाना है। एक अंग्रेज़ विद्वान् ने लिखा है—

"A moral revolution has already begun, Anthropologists like Fraser have robbed morality of its divine sanction, psychologists like Havelock Ellis have shown that it is often contrary to the interest of man, and lastly novelists like D. H. Lawrence have thundered against it to a larger public."

अर्थात् सारे नियमों को धता बताना अच्छा नहीं है, परन्तु कट्टरपन और अन्धविश्वास का समर्थन भी नहीं किया जा सकता। हम स्त्रियों के सम्बन्ध में जिन खूसट पुरुषों की जेब गरम होती हैं, असल में वे ही अड़ंगे लगा रहे हैं। यदि हम वास्तविक अपना सुधार करना

चाहती हैं तो हमें दृढ़ता के साथ अपने अधिकारों के लिए जंग करने को उतर पड़ना चाहिए। फिर आप ही आप सुख-शान्ति का दरवाज़ा खुल जायगा और हमारी अच्छाइयों के सभी गुणग्राहक होकर अपना मस्तक झुकावेंगे। अब रसोई बनाने का समय हो रहा है, इसलिए क्षमा करना। फिर लिखूँगी। तुम्हारी ननद को प्यार कहना।

तुम्हारी—सहेली

पत्र ७

प्रेम

साईंखेड़ा

२६ दिसम्बर, १९३३

प्रिय बहन,

सप्रेम तस्लीम।

प्रेमी प्रेमी के होते हैं, हृदय, विचार समान।
एक दूसरे मन की बातें, झट लेते हैं जान॥

प्रेम! मानव-जाति का भूषण है, लोक-परलोक का कल्याणकारी पथ है, जीवन का मुक्तिदाता अस्त्र है, और इच्छित आशाओं का सरल साधन है। वास्तविक में,

Love is god and god is love

"प्रेम ही ईश्वर है और ईश्वर ही प्रेम है।"

जिस प्रेम के लिए लोग तरह-तरह की उपासना करते हैं, जिस प्रेम के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर अपने प्रेमी के मिलने के लिए खाक में मिल जाते हैं, जिस प्रेम से क़ैस मजनूँ बनकर संसार में एक आदर्श पवित्र धारा बहा चुका है, जिस प्रेम से स्वामी विवेकानंद, स्वामी

रामतीर्थ. "अहं ब्रह्मास्मि" पद को लेकर अपने यश की पताका गाड़ गये हैं, जिस प्रेम का डंका कबीर ने बजाया, जिस प्रेम की प्रेरणा से दुर्गावती, लक्ष्मीबाई और सुल्ताना चाँदबीबी ने रणचंडी की आराधना की, जिस प्रेम के बल पर ध्रुव और प्रह्लाद ने विजय-दुन्दुभी बजाई, जिस प्रेम से धर्म-पिपासुओं ने ईश्वर के दर्शन किये, उसी प्रेम (इश्क़) को साधारण व्यक्ति बदनाम करते हैं। संसार में सफलता प्राप्त करने के लिए प्रेम का अटल भक्त होना पड़ता है और प्रेम सरीखे पवित्र मंत्र को जपना पड़ता है। उसी प्रेम से डरना, और उसे हौआ समझना कितना बड़ा कायरपन है? जिस तरह मर्द लोग प्रेमपथ पर चलने के लिए कई मौलिक अनुसंधान करते हैं, उसी भाँति स्त्री-समाज को भी प्रेम करने का अधिकार है। सभ्य समाज को चाहिए कि कन्याओं को स्वतंत्रता दें, उनके मार्ग में बाधा न खड़ी करें। श्रीमती सरोजिनी नायडू ने अ० भा० स्त्री-सभा, कराँची में घोषणा की थी कि होशियार लड़कियों को पिंजरे के भीतर रखना शोभा नहीं देता? वे पिपरमेन्ट का सत या कच्चा धागा नहीं हैं। यदि उन्हें अपने पैरों पर खड़ा किया जाय, तो वे भी संसार के रवैये को देखकर अपना भावी जीवन सुखमय बना सकेंगी। फिर कभी स्त्री-समाज की हीनता पर आँसू न बहाने पड़ेंगे; क्योंकि

वे स्वयं स्वार्थी, धनलोलुप अभिभावकों की परीक्षा कर लेंगी। वे हर्गिज़ किसी की चालों में न आवेंगी।

उनका जीवन कंटकाकीर्ण न रहेगा; उन्हें पतित होने और आत्महत्या का मौक़ा ही न मिलेगा। परंतु मेरा ध्येय यह नहीं कि पश्चिमी सभ्यता के अनुसार हम भारतीय बहनों को पूरी स्वच्छन्दता से रहना चाहिए। हम सत्य, धर्म और गंभीरता के विचारों में प्रवेश करें और प्रत्येक दशा में पवित्र प्रेम को वासनाओं से रहित कर भव्यभाव से कार्य करें, तो जीवन-यात्रा में विजय मिल सकती है। मान लो, हमारे कुटुम्बी, कठोर, उग्र स्वभाव के भोंदू हैं तो भी हम उन्हें धीरज के साथ अपनी प्रेमभक्ति द्वारा सुधार सकती हैं। बहादुरी इसी में है कि हम बुरों को सुधारें। प्रेम दिखावटी नख़रों से और मोल करने से प्राप्त नहीं हो सकता। न हम सच्चे प्रेम को मार-पीट और लोभ-भय से दूर कर सकती हैं। वह तो स्वाभाविक रूप में आत्मा के साथ रहता है। प्रेम के पुजारी, प्रेम के भिखारी और प्रेमीगण महान् योद्धा होते हैं। इसलिए आप अपने विरोधियों को सुधारने के लिए प्रेम का भजन शुरू कर दो। सारे संकट मिट जायँगे। शेष फिर।

तुम्हारी—सहेली

पत्र ८

वरसम्बन्धी विचार

साईंखेड़ा

५ जनवरी, १९३४

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। कुछ प्रसन्नता हुई और कुछ आश्चर्य! क्या तुम भी पुराने ढकोसलों में फँसकर नाई-पुरोहितों के द्वारा वर की खोज कराने के लिए उतावली हो रही हो? वर्तमान समय के वायुमण्डल को देख-सुनकर मैं यह स्पष्ट प्रकट करूँगी, कि अब स्त्रीजाति को इस सम्बन्ध में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करनी चाहिए। जब तक हम लोग अपने पैरों पर खड़ी न होंगी तब तक दम्पति-जीवन भी सुखदायी न होगा। अपनी शिक्षा-समाप्ति के पश्चात्, देश समाज धर्म की आज्ञानुसार पूर्ण वय प्राप्त कर कन्याओं को दम्पति बनने के लिए अपने जीवन-संगी का चुनाव स्वयं करना चाहिए। सम्बन्ध करने के पहले अपने होनहार पति के विषय में पूर्ण जाँच-पड़ताल भी कर लेना सर्वोत्तम है। कई मनचले युवक शिक्षित युवती से सम्बन्ध करने के लिए लालायित रहते हैं।

वे ऐसी कन्याओं से सदैव कुसमय पर ही मिलते हैं। ऐसी विकट परिस्थिति में कन्याओं को विशेष सावधान होकर साफ़ मन से, शान्ति और सभ्यता का व्यवहार करना चाहिए। किसी भी प्रकार से, प्रेम और आर्थिक हीनता आदि उनके सामने प्रकट न करना चाहिए। यदि वे परख करना चाहती हैं, तो साहस करके बुद्धि-विद्या-बल से करें; परन्तु उतावलापन न आने पाये. और न उन युवकों को यह ज्ञात ही हो कि ये हमारी परीक्षा कर रही हैं। शीघ्र चापलूसी या किसी आवेग से एकदम अपना हृदय नहीं दे देना चाहिए, नहीं तो जीवन भयानक पतित हो जाता है। कहा है—

बिना बिचारे जो करे, सो पीछे पछिताय।
काम बिगारे आपनो, जग में होत हँसाय॥

अक्सर कुछ नवयुवतियाँ थोड़े-से दिखावटी प्रेम और खुशामद के सब्ज़बाग़ पर लट्टू हो जाती हैं। यह बड़ी दुःखद घटना है। इससे शरीर, आत्मा और भावी सुधार का नाश होकर जीवन जर्जर हो जाता है। और फिर जन्म भर को दुःखसागर में फँसकर तड़पना पड़ता है। जब तक हम स्वयं अथवा अपने हितैषियों द्वारा जीवन-साथी (पति) का चुनाव करने के लिए आगे न बढ़ेंगी, तब तक हमारा सांसारिक दम्पति-जीवन हरा-भरा नहीं हो सकेगा। प्रेम वह वस्तु है, जो बुरी दशा में भी साथ दे

और सदा निबाह करे। यह स्मरण रहे, कि कई मनचले युवक, "मनोविनोद के लिए ही" सुन्दर, सुशील, गुण-सम्पन्न नवयुवतियों को भ्रष्ट करने के साधन दिखावटी सेवा, लोभ, बड़ाई द्वारा प्रेम की बड़ी-बड़ी डींगें मारते रहते हैं। इससे आदर्श बन्धन की जड़ खोखली होकर अतिशय विनाश होता है, अतएव स्त्री-समाज को अपने इस आवश्यक कार्य की महत्ता और सुधार के लिए साव-धान रहना चाहिए। मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि कन्याएँ अपने कुटुम्बी व अभिभावकों को बलाए ताक़ रखकर अनैतिक मार्गों से वर के चुनाव में भाग लिया करें। चूँकि हमारे देश में प्राचीन काल में 'स्वयम्बर' होता था, परन्तु अब समय यह बतलाता है कि हम नाई-पुरोहितों की बातों पर या कुछ स्वार्थियों के जाल में ही फँसकर अपना नुक़सान न करती रहें। सखी, तुम अब दुनिया भर के सुधारों का ठेका मुझे ही न दिया करो। कुछ तुम भी तो सोचा करो। मेरी चिट्ठियों का पोथा बनाकर क्या करोगी? भला, ऐसा मज़ाक़ क्यों करती हो? मेरी चिट्ठियों को कमरे में चित्र की तरह रखने से अथवा लगाने से क्या लाभ होगा? देशभक्त वीराङ्गनाओं के सिद्धान्त से कमरा सजाया करो। शेष फिर।

आपकी—सहेली

पत्र ६

विवाह

साईखेड़ा

२ फरवरी, १९३४

प्रिय बहन,

नमस्ते।

तुमको न मालूम कौन-सी खब्त सवार हुई है, जो तुम मुझे सैकड़ों ऊल-जलूल बातें लिख-लिखकर परेशान करती रहती हो। लो भई, विवाह के ऊपर ही मैं कुछ लिखे देती हूँ। विवाह से घर, और घर से समाज की सृष्टि होती है। अतएव समाज की नींव विवाह है, और विवाह-पद्धति देखकर समाज का ढाँचा बहुत कुछ मालूम किया जा सकता है। यही कारण है कि प्राचीन या अर्वाचीन, पूर्वी या पश्चिमी जितने भी परिडतों ने समाज-शास्त्र पर विचार किया है, उन्होंने सबसे पहले विवाह के ही प्रश्न को लिया है। अध्यात्म और नीति-शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित लोकमान्य

बालगंगाधर तिलक ने भी अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ गीता-रहस्य में इसी प्रश्न का उल्लेख किया है। उन्होंने कई ऐतिहासिक प्रमाण देकर बताया है, कि प्राचीन काल में स्त्री-पुरुष स्वच्छन्द घूमा करते थे, परन्तु इसमें अनीति देखकर श्वेतकेतु ने विवाह की पद्धति प्रचलित की। सभी धर्म-ग्रन्थों ने इसी प्रकार की कल्पना की है। बाइबिल और क़ुरान में लिखा है कि "खुदा ने आदम और हौवा को विवाह-सूत्र में बाँधा।" परन्तु यह स्पष्ट नही प्रकट होता, कि विवाह की कल्पना आई कहाँ से ? समाज-शास्त्र का यह नियम है कि किसी भी विचार का विकास क्रमागत हो सकता है। जिस विचार या कल्पना का अस्तित्व समाज में है ही नहीं, वह विचार या कल्पना समाज में अकस्मात् नहीं आ सकती। धर्म ग्रन्थों के उपयुक्त विचार का समर्थन सर जान लुबाक, प्रो० वेस्टर मार्क प्रभृति अर्वाचीन पंडितों ने भी किया है। इन पश्चिमी पंडितों की सम्मति है, कि समाज की आरंभिक अवस्था में पुरुष और स्त्री स्वच्छन्द विचरण करते थे, और किसी भी प्रकार का वैवाहिक बन्धन नहीं था। धर्म-ग्रन्थों ने मनुष्य का विकास नहीं मानकर सृष्टि मानी है, अतएव उपयुक्त कल्पना से आगे जा नही सकते थे। परन्तु इन अर्वाचीन पंडितों ने विकास के सिद्धान्त के अनुसार, इस प्रश्न पर सूक्ष्म विचार

किया है। उनका कहना है कि मनुष्य विवाह की कल्पना को पशु-पक्षी योनि से साथ लाया है। प्रमाण में उन्होंने ह्वेल मछली, विभिन्न पक्षी, गैंडे, दक्षिणी आफ्रिका की बिल्लियों और सुमात्रा के बन्दरों का जोड़े मे रहना सिद्ध किया है। यह तो विवाह की उत्पत्ति दिखाने के उद्देश से किया गया है। हिन्दू-धर्म-शास्त्र विवाह का उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति ही बताते हैं, परन्तु बड़े संघर्ष के पश्चात् यह सिद्ध होता है कि विवाह का उद्देश्य आर्थिक ही है। निम्न श्रेणी के जीवों में, जिनका लाभ जोड़े में नहीं है, वे अकेले रहते हैं, परन्तु जिनका लाभ शिकार आदि की दृष्टि से जोड़े के रहने मे है, वे जोड़े ही में रहते हैं।

जीव-जन्तुमात्र का पहला प्रयत्न खूराक के लिए होता है। खूराक मिल जाने पर इंद्रिय-सुख का विचार उठता है। जिस ऋतु में खूराक का बाहुल्य हो, वही जोड़े का मौसम है। इसके बाद नर-मादा का साथ-साथ रहना आवश्यक नहीं है। वे साथ तभी रहते हैं, जब शिकार की दृष्टि से वांछनीय होते हैं। यों तो सिद्ध है, कि संतान-संग्रह का काम एकमात्र मादा करती है। नर का साथ रहना इस कार्य के लिए ज़रूरी नहीं है, और यदि वह साथ रहता है, तो इसका कारण आर्थिक ही है। मछली आदि प्राणी सन्तानों के लिए जान क्यों

नहीं दे देते इसका यह खुलासा अर्थ है कि इन्द्रिय-सुख का आकर्षण इतना बलवान् है, कि उसके मुक़ाबले में जीवन तुच्छ दिखाई देता है। प्राणिविज्ञान-वेत्ताओं का कहना है, कि जीव-जन्तुओं के कितने अवयवों की सृष्टि ही ऐन्द्रिय सुख के लिए हुई है। डार्विन ने अपनी एक पुस्तक में लिखा है, कि कई जन्तुओं के पैर और पेट की बनावट इसीलिए है, कि वे आलिङ्गन कर पूर्ण इंद्रिय-सुख भोगें। प्राणिविज्ञान यह भी कहता है, कि गर्भ धारण करने, बच्चा जनने, दूध पिलाने और बच्चों का पालन-पोषण करने में किस प्रकार का आनन्द है, इसे छोटे-छोटे प्राणी भी जानते हैं और इसी बच्चे के सुख के निमित्त वे अपने प्राण भी गँवा देते हैं।

सुमात्रा के आरेअन नामक जाति की, आसाम की खैन्त्रिया, पहाड़ी पर बसनेवाली सिराङ्ग जाति की, और मालाबार की नायर जाति की स्त्रियाँ अपने पति के घर नहीं रहती। वे अपने पितृ-गृह ही में रहती हैं, केवल रात्रि में वे पति से मिलती हैं। इनकी संतानों पर पति का कुछ भी अधिकार नहीं होता। आफ़्रिका में एक जाति है, जिसकी स्त्री को जब गर्भ रह जाता है, तो उसे गाली दी जाती है, और उस पर ईंटों की वर्षा की जाती है। वह स्त्री भागकर जंगल में चली जाती है, जब बच्चा हो जाता है, तब वह गाँव में आती है। बहुत-

सी जातियों में दूल्हे के बल की जाँच कई प्रकार से की जाती है। नेपाल की तराई में एक जाति लोनिया है, जिसमे विवाह के पूर्व जंगल की लकड़ी कटाई जाती है। अरब में वर को कन्या हंटर मारती है। अभी तक कई जातियों में ऐसे रिवाज नष्ट-भ्रष्ट मौजूद हैं। हिन्दू पौराणिक काल में भी स्वयंवर होते थे। इस तरह विवाह का उद्देश्य सर्वथा आर्थिक है। परन्तु अब धीरे-धीरे परिवर्त्तन होता जा रहा है। आर्थिक क्रान्ति सफल होने पर वैवाहिक ढाँचा बदल जायगा, जिसके लक्षण भी दिख रहे हैं।

तुर्की में भी विवाह का आदर्श सर्वव्यापक हो रहा है। वहाँ अधिकांश मुस्लिम जनता वास करती है। मुस्लिम-समाज में विवाह का महत्त्व और सौन्दर्य इस समय विशेष है। दूसरे-दूसरे धर्मों में भी विवाह की उत्तमता प्रभावशाली है। आज तुर्की में किसी पुरुष को ३० वर्ष से कम अवस्था में, और किसी भी लड़की को २० वर्ष से कम अवस्था में विवाह करने की इजाज़त नहीं है। लड़के-लड़कियों को ही अपना जोड़ा आप चुनने का अधिकार है। लड़के और लड़की की स्वीकृति के पश्चात्, अभिभावक म्यु० कमेटी में अर्ज़ी देते हैं, जहाँ डाक्टर लोग उनकी शारीरिक और वैवाहिक अवस्था की जाँच करते हैं, फिर चार गवाहों की गवाही के

साथ जन्म का राजस्तरी का ज्ञात होता है। पश्चात् क़ाज़ी के पास मय गवाहों के उनके इक़रारनामों पर सही होती है। दोनों के इक़रारनामे अलग-अलग रहते हैं। इसी तरह हिन्दुस्थान के मुसलमानों में भी लड़के-लड़की की रज़ामन्दी ही पर क़ाज़ी निकाह (विवाह) कराता है।

सच्चमुच विवाह क्या है ?

दो अनुकूल हृदय मिलते हैं—तब विवाह, विवाह कहलाता है।
ऐसा ही विवाह जीवन में, सारे दुःख हटाता है।
नीर क्षीर के सदृश, हृदय जब, मिल जाते हैं दम्पति के।
तब अपने ही आप द्वार, खुल जाते हैं, सुख सम्पति के।

पति-पत्नी अपनी आत्मा को इतना विकसित करें, कि जब तक उनके लड़के-लड़की की शादी हो, तब तक वे मोह के बन्धन में न फँसें, और परमार्थ को स्वार्थ बनाने का पाठ सिखाते-सिखाते अपने क्षुद्र स्वार्थ से सर्वथा ऊपर जायँ। जिसने गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करके उसमें से निकलना नहीं सीखा, जिसने बन्धनों में पड़कर उन्हें काटना नहीं सीखा, वह गृहस्थ-आश्रम को कीचड़ बना लेता है, और स्वयं कीड़ा होकर उसमें रहने लगता है। आदर्श के अनुसार गृहस्थ-आश्रम तभी सफल कहा जा सकता है, जब आयु के एक खास भाग

में आकर जैसे साँप कचली उतार फेंकता है, वैसे ही इस आश्रम को भी छोड़ दिया जाय। संसार में एकता देखने में जीवन है, और भिन्नता देखने में मृत्यु। गृहस्थ मनुष्य को भिन्नता की तरफ़ से खींचकर एकता की ओर जीवन की अमर सीढ़ी पर चढ़ना है। बस, यही विवाह का प्राचीन भारतीय आदर्श है। विवाह के सिलसिले में बातचीत अपढ़, अशिक्षित, स्वार्थी पुरुषों के द्वारा कदापि न होना चाहिए। मँगनी (सगाई) का समय अधिक न रखा जाय, और इस सम्बन्ध के पश्चात् अधिक हेलमेल होने से, अथवा एक दूसरे की बुराइयों के उग्ररूप धारण करने से मँगनी तोड़ दी जाती है। परन्तु यह निन्दनीय है। या तो मँगनी की ही न जाय, अन्यथा तोड़ने में हानि भी नज़र आने लगती है। अतएव विवाह के लिए वर-कन्या के पूर्ण गुणों पर विचार करके और परीक्षा करने के पश्चात् अपनी जाति, नियम, गोत्र, आचार-विचारों के अनुसार, स्वजाति स्वधर्म में सम्बन्ध दृढ़ करना चाहिए। ख़ान्दान की जाँच भली भाँति ख़ूब करनी चाहिए। जहाँ तक हो, अपनी बराबरीवालों में सम्बन्ध शोभित होता है। धन, नाम, मान, विद्या आदि को देखकर ही हम एकदम से लट्टू न हो जायँ। इसमें बड़ी ग़लती है। असल में उनके कुटुम्बियों तक के शुद्ध ख़ान्दान की जाँच की आवश्य-

कता है। जहाँ तक हो सके, दूसरे स्थान में अनिकट सम्बन्धियों से सम्बन्ध करना चाहिए। कुछ लोग अपने खान्दानी घमंड में घर ही घर में रिश्ता करते रहते हैं, जिससे बहुत नुक़सान होता है। विवाह सादगी के साथ, अपने भव्य विचार और समाज के सहयोग से, बड़े-बूढ़ों का आशीर्वाद प्राप्त करते हुए, आनन्दपूर्वक करना चाहिए। समयानुसार सुधारों की आवश्यकता भी रहती है। इस तरह दम्पति-जीवन सराहनीय हो सकता है। शेष फिर।

तुम्हारी—सहेली

पत्र १०

नये घर में प्रवेश

साईंखेड़ा

११ फ़रवरी, १६२४

प्रिय बहन,

इस पत्र में बड़ी मज़ेदार बात सुन पड़ी है। तुम्हारी ननद् मनोरमा का शुभ विवाह हो चुका है। ईश्वर वर-वधू को चिरायु कर सदैव प्रसन्न रक्खे। मेरी ओर से मँझली बुआ को 'नये घर में प्रवेश' का निम्न सन्देश दे दीजिएगा। नवोढ़ा अल्हड़ कन्याएँ, जो एकदम बहू बनकर जाती हैं, वे आश्चर्य में पड़कर भयभीत रहती हैं। कहाँ मा-बाप और कहाँ पतिगृह? असल में दुलहन को अपने मा-बाप के घर से स्नेह छोड़कर पतिगृह को ही सब कुछ समझना चाहिए। उसे केवल पति से ही नहीं, उस घर, कुटुम्ब, जाति, और ग्राम आदि को सेवा, प्रेम से सबको सन्तुष्ट करना चाहिए; क्योंकि उसका वास्तविक उद्धार वहीं से होगा। सास, ससुर, जेठ-जिठानी, ननद, देवर आदि की सच्चे मन से सेवा-टहल श्रद्धापूर्वक करते हुए, उनको प्रसन्न रखना चाहिए। कुछ घरों

में सास-ननद अपढ़ और उजड्ड होती हैं। वे नवोढ़ा बहू पर सारा भार लादकर नुक्ताचीनी करने में ही अपनी शान समझती हैं, गालियाँ निकालना तो उनका स्वाभाविक काम है। परन्तु फूहड़ गालियाँ देकर डंडे भी रसीद करती रहती हैं। बेचारियों के माँ-बाप को पेट भर-भर कर कोसने और धज्जियाँ उड़ाने में शेखी बघारती हैं। ऐसी पिशाचिनियों से हमारी पढ़ी-लिखी बहनों को ख़ूब सावधान रहना चाहिए, ताकि जीवन पतित न होने पावे। यदि प्रसंग आ जाय तो यथानुकूल व्यवहार करके अपने स्वभाव, विचार, सिद्धान्त आदि की चिन्ता न कर, उन्हीं की सम्मति व इच्छा के अनुसार सहयोगिनी बनकर काम करना चाहिए। हाँ, धीरे-धीरे अपने प्रेम का अटल प्रभाव होने पर उन्हें सुधार की ओर आकृष्ट करते रहना चाहिए; क्योंकि वही अपना घर है, उसमें जो कुछ सुधार व वृद्धि दृष्टिगोचर होगी, उसका श्रेय हमको ही मिलेगा। तारीफ़ तो तभी है कि पढ़ी-लिखी बहनें देहातों में असभ्य सास-ननदों को शान्ति और सरल प्रकृति से सेवा करके उन्हें सुधारें, और धीरे-धीरे अपने मनोभावों को विकसित करें। वधू, घर-गृहस्थी के सारे छोटे-मोटे काम अपने ही हाथ से करके व सुन्दर स्वादिष्ठ भोजन बनाकर सबको सन्तुष्ट करती रहे। स्वच्छता और चतुराई का प्रयोग

भली भाँति करे। उसे सीने-पिरोने आदि का काम, और दुःख-बीमारी में सहायक होकर उनका प्रिय पात्र बनना चाहिए। समयानुसार सेवा, सहानुभूति के साधनों से उसकी बड़ाई, पास-पड़ोस में, और फिर गाँव भर में हो जायगी। उसका कर्तव्य अथवा उसकी स्वाभाविक आदत, अपने घरवालों के सङ्केतानुसार, पड़ोसिन व बड़ी-बूढ़ी आनेवालियों का आतिथ्य-सत्कार, प्रेमसागर में हिलोरें लेते हुए रहना चाहिए। वह अपनी बड़ाई से प्रसन्न न होकर, अथवा अपनी बुराई से नाराज़ न होकर, केवल सरल प्रकृति और मिठास-भरे वचनों से सबको उत्साहित करती रहे। उसकी बुद्धि, विद्या, चतुराई, उच्चता का प्रकाश तब फैलेगा, जब उसका पतिगृह आदर्श हो जाय। इसी से उसकी वीरता और महत्त्व का रहस्य भी प्रकट होगा। हाँ, कुछ बहनें एकदम घबराकर अनैतिक मार्ग को देखने लगती हैं। मैं उन कायर बधुओं अथवा बहनों से कुछ भी आशा नहीं कर सकती। अगर कुछ विवेक है तो कष्ट झेलो, और त्यागी बनकर संसार में अपना पवित्र जीवन भव्य करके दिखा दो। अब आप इस विषय को खूब समझकर उन्हें भी समझा देना। शीघ्र दूसरे पत्र में कुछ मसाला लिखकर भेजूँगी।

तुम्हारी—सहेली

पत्र ११

पतिव्रत

नरसिंहपुर

२८ फ़रवरी, १९३४

प्रिय बहन,

मैं परसों ही यहाँ पतिदेव के साथ आई हूँ। यहाँ पति सर्विस पर अकेले थे, इसलिए चची ने मुझे ज़बरन् इसलिए भेज दिया, कि "जहाँ सुई, वहीं डोरा" शोभित होता है। है भी बात ठीक। यह तो आपको ज्ञात ही है कि स्त्री जाति जहाँ एक ओर मृदुता, अनुराग - प्रियता, स्नेह-प्रवणता, कोमलता, और वात्सल्य भाव की जीती जागती मूर्ति है, वहाँ दूसरी ओर उसमें बड़ी दृढ़ता, उत्तेजना, साहस, और उमंग भी भरी रहती है। मेरे हृदय में—

"एकहि धर्म एक व्रत नेमा;
काय वचन मन पति पद प्रेमा,"

का अलाप ख़ूब हिलोरें लेता रहता है। अनुभव भी

कहता है कि, यदि बहनें अपने जीवन का आदर्श सुधार करना चाहती हैं तो उनको चाहिए कि वे अपने परम धर्म पतिव्रत के महत्त्व को भली भाँति समझें। इस मूलमंत्र से ही अपना यश लोक-परलोक में सौरभित हो सकता है। वास्तव में पतिव्रत वह महान् शक्ति है, जिसके बल से सावित्री ने सत्यवान् को जीवित किया था, सती अनसूया ने अपने इसी धर्म के तेज से तीनों लोकों में डंका बजा दिया था।

फ़ातमा ने अली का गौरव बढ़ाया था। निर्धन घरों की छोटी, मोटी बहू बेटियों ने भी इस पतिव्रत के आधार से, बड़े बड़े सम्राटों तक के मदों को चकनाचूर कर दिया है। मृदु-स्वभाव अबलाएँ प्रबल स्नेह और अनुराग की उत्तेजना में पड़कर क्या नहीं कर सकतीं! मतलब यह कि वे सब कुछ करने का साहस कर सकती हैं। इसलिए उन्हें अपने पति की सच्ची सेवा करने में ही अपने को कृत-कृत्य समझना चाहिए। जो बहनें—

"उत्तम के अस बस मनमाहीं। सपनेहु आन पुरुष जग नाहीं॥"

के आधार पर पति भक्ति में लवलीन रहती हैं, उन्हीं का जीवन धन्य है। उन्हें इन बातों पर ध्यान देना चाहिए।

(१) अपने पति पर पूरी श्रद्धा रक्खो और विश्वास करके सच्चा प्रेम करो।

(२) पति की प्रशंसा सदैव करो, उस पर हुकूमत न करो।

(३) पति का हृदय परखो, सुन्दर भोजन बनाओ, अपनी सुन्दरता बनाये रक्खो।

(४) अपना समय बरबाद न करो, कलह न करो, चेहरा खुश रक्खो।

(५) पति की आज्ञानुसार काम करो, क्रोध को न आने दो।

भारत की शिष्टता और भव्यता में यदि महत्ता है, तो केवल पतिव्रत की। इसलिए प्राण जाते तक पतिव्रत धर्म का पालन करना, स्त्री जाति का परम और अति, आवश्यक कर्तव्य है। अब मैं अपना सब प्रबन्ध करके फिर खुलासा उन बातों पर प्रकाश डालूँगी।

तुम्हारी-सहेली



पत्र १२

दम्पति-जीवन

नरसिंहपुर

९ मार्च, १९३४

प्रिय बहन,

फिर आपकी नई फ़रमाइश का फ़रमान आ गया है। मैं तो हैरान हूँ कि अपना घर-धंधे का काम करूँ, या मुहर्रिर बनकर हमेशा क़लम दावात ही लिये रहूँ। मुझे तो अपना दम्पति-जीवन विशेष गौरव की वस्तु है। प्रकृति के नियमानुकूल, नर-मादा जोड़ा बनकर, अपना जीवन भली भाँति व्यतीत कर सकता है। जीवन-नौका की गाड़ी, स्त्री पुरुष बैलों से ही चलती है। यदि पुरुष सत्यता के साथ ईश्वराज्ञानुसार एक अबोध कन्या को सज्जनता और मनुष्यता के नियम से चुनकर अपनी पत्नी बना लें तो ठीक है; क्योंकि आजकल पुरोहितगण व बीच वाले अपने स्वार्थवश खूब थैलियाँ भरकर अनमेल विवाह करा देते हैं, और कामान्ध पुरुष थोड़े ही समय

में स्त्रियों को ठुकरा देते हैं। समय की ख़राबी से पुरुष-समाज फिर कई पत्नियाँ रखकर तथा मनमाने समय में उन्हें छोड़कर अपनी इन्द्रियों के वशीभूत हो, विलासिता करने लगे हैं। इसी से नारीसमाज दुःखित हुआ, और धार्मिक महापुरुषों ने विवाह के नियम नियुक्त किये। विवाह पंचों व समाज के ही सम्मुख होता है। मेहर अथवा ठहरौनी भी हो जाती है, जिससे तलाक़ देते समय स्त्रियों को वह रक़म मिलती है। पति पत्नी में दूध पानी की तरह प्रेम रहना चाहिए, जिससे होनहार संतति और आसपास की पड़ोसिनों तथा जाति समाज की बहनों पर आदर्श प्रभाव पड़े। पत्नी का धर्म पति की इच्छाओं, भावों, विचारों और आदेशों पर हर वक़्त चलना ही है। यदि पति महाशय दुराचारी, विषयी, क्रोधी व अवगुणी हैं, तो भी पत्नी को उनके प्रति क्रान्ति न मचाकर प्रेमपूर्वक अपना प्रभाव जमाकर सुधार की ओर घसीटकर, उन्हें सच्चरित्र बनाने की चेष्टा करनी चाहिए। यदि पति अभिभावकों के हाथ की कठपुतली है, यदि वह सास-ससुर आदि का गुलाम है, तो भी पत्नी को सास-ससुर की सेवा करते हुए घर में अपना स्थान सुरक्षित रखना चाहिए। वास्तविक सुख लूटने के लिए उसे त्याग और तपस्या के साथ तन्मय होकर, पति की आज्ञा का पालन करना चाहिए। कलह, लड़ाई-

झगड़ों से अथवा रूठ जाने से कोई भी लाभ नहीं होता। जेवर-कपड़े की विशेष लालसा भी बाधक होती है। मैं तो पूर्ण सुखी हूँ। ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि सब बहनें मेरी ही भाँति सुखी होकर प्रसन्न रहें।

तुम्हारी—सहेली



पत्र १३

अशिक्षा

सेठ बेलखेड़ी

१२ एप्रिल, १९३४

प्यारी बहन,

नमस्ते

मत रोओ! तुम्हीं क्या? सारा स्त्री-समाज आज दुखी है। वास्तव में अपने जन्मसिद्ध अधिकारों और स्वत्वों को छीनकर, पुरुषों ने पूर्ण रूप से हमारा पतन कर डाला है। आज वीर बालाओं को अबलाओं के रूप में देखकर ये रोते और दुनिया हँसती है। जो हो. बीती बातों पर पश्चात्ताप करना तभी सफल हो सकता है, जब उसकी आड़ में सच्चे प्रायश्चित्त और दृढ़ संकल्प की भावना छिपी हो। अतः हम विचार करें कि हमारी वर्तमान अवस्था क्या है, किन संस्कारों में पड़कर आज हम इतनी गिरी हैं, और किन साधनों के उद्योग से हम पुनः अपने पूर्व गौरव को प्राप्त कर, समाज, देश एवं परिवार की हितकारिणी बनेंगी।

खूब छानबीन करने, सोचने और विचारने के पश्चात् मैं इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ, कि भारतीय स्त्रियों के कल्याण एवं पूर्ण विकास के पथ में अनेक बाधाओं के रहते हुए भी मुख्य दो बाधाएँ ऐसी हैं, जो सर्व प्रथम हमारे सर्वनाश का कारण बनी हैं। एक का नाम है 'परदा' और दूसरी 'अशिक्षा'। यद्यपि अशिक्षा के कारण ही परदे की नींव जमी; परन्तु, सचमुच एक ही समय में इन दोनों का संयोग, एवं इतनी घनिष्ठता, समाज के लिए काल से भी अधिक भीषण और यक्ष्मा से भी अधिक घातक है। भारत में पर्दा-प्रथा कैसे और कब से शुरू हुई? इसके सम्बन्ध में लोगों के भिन्न-भिन्न विचार हैं। कोई कहता है कि मुसलमानों के आने के समय से इसका आरंभ हुआ और कोई रामायण-काल को बतलाते हैं। परन्तु रामायण के प्रमाण संदेहजनक ही नहीं, असंभव-से दिखते हैं। पहले स्वयंवर के समय भरी सभा में स्त्रियाँ बेपर्द आतीं और घूम-घूमकर राजाओं का निरीक्षण करती थीं। सीता का भी स्वयंवर हुआ था। कैकेयी दशरथ के साथ युद्ध में गई थी, और उन्हें मदद की थी। कौशल्या, सुमित्रा, तथा पाण्डव और कौरव-कुल की स्त्रियाँ भी सब जगह जातीं, और सबसे खुले आम बातें करती थीं। अतः प्राचीन भारत में पर्दा-प्रथा का प्रचार किसी तरह सिद्ध नहीं

किया जा सकता। वैदिक युग में भी इसका नाम-निशान न था। हाल के इतिहास से भी कई वीराङ्गनाओं का घोर युद्ध में जाने का परिचय मिलता है। दुर्गावती और लक्ष्मीबाई ने शत्रुओं के दाँत खट्टे किये थे। जो हो, इससे हमें कोई बहस नहीं है। जिस बात को हम अपनी बुद्धि के अनुसार सब प्रकार से समाज के लिए हानिकर और घातक समझते हैं, वह चाहे किसी युग में रही हो, प्रामाणिक समझकर ठीक नहीं मानी जा सकती। ऐसा समझना मानसिक दासता और अपनी आत्मा की दुर्बलता है।

यों तो भारत के सभी प्रान्तों में किसी न किसी रूप में परदा मौजूद है, परन्तु बिहार व संयुक्तप्रान्त के कुछ भागों मे इसका घोर साम्राज्य है। इस प्रथा के कारण समाज का कितना अपकार हुआ है, अथवा हो रहा है, यह कौन नहीं जानता। स्त्रियों का स्वास्थ्य घर में रहते-रहते शुद्ध हवा और यथेष्ट प्रकाश के अभाव से नष्ट हो जाता है। आज भारत की लगभग ५० फ़ीसदी स्त्रियाँ किसी न किसी प्रकार के रोगों से ग्रस्त हैं। नीरोग स्त्रियाँ भी दुर्बल और क्षीणकाय हो गई हैं। यदि इनको दो-चार कोस पैदल चलने की नौबत आ जाय, तो ये नहीं चल सकती। यदि ऐसी परदावालियों को लेकर पुरुष कहीं रेल-यात्रा करते, व और कहीं

जाते हैं, तो उनकी देखभाल करते-करते पुरुषों के ऊपर आपत्ति आ टूटती है। घर के वयोवृद्ध और अपनों से हो नहीं, स्त्रियों से भी कहीं-कहीं पर्दा होता है। इस पर्दे से हर तरह के सैकड़ों नुकसान हो रहे हैं। मुस्लिम बहनों का तो जन्म शायद सन्दूक में बंद रहने के ही लिए हुआ समझो। परदेवाली को समाज और देश की कोई भी खबर नहीं मिलती। उसे किसी तरह का बाहरी ज्ञान व साहस नहीं रहता है और न वह किसी दुर्घटना का सामना करने की शक्ति ही रख सकती है।

इसके अलावा हम अबला कहलाती हैं। केवल हमारी अशिक्षा के कारण ही अन्धविश्वास, गन्दी आदतें, गन्दे रस्म-रिवाज एवं फूहड़ विचार हमारे यहाँ डेरा डाले पड़े हैं! गहनों से लदने की आदत है। सास-बहू ननद-जेठानी से लड़ने, गाली-गलौज करने में ही रत रहती हैं। क्या खाना पकाना और संतान पैदा करना ही हमारे कर्त्तव्य की इतिश्री है? नहीं, अशिक्षित होने से समय का सदुपयोग भी नहीं कर पातीं। बात तो यह है कि संतान को भी ये योग्य और आदर्श इसीलिए नहीं बना पाती। किन्तु मैं मानती हूँ कि इसका उत्तरदायित्व पुरुषों पर ही है। वे हमें सदा पैरों की जूती ही बनाने की धुन में रहते हैं। कोई सुधार करना चाहता है तो उसे नहीं मालूम वह वक्रदृष्टि क्यों

गड्ढे में गिराती है। हाँ, इसके लिए उदार हृदय और सच्ची लगन की आवश्यकता है। पुरुषों ने मिथ्या आवेश और अदूरदर्शिता में पड़कर हमारे जन्मसिद्ध अधिकारों को छीनकर अबला बनाने के हथकंडे रचे हैं; तभी तो आज उन्ही भरत-हृदया भारत की दीन ललनाओं की आहों से भस्मीभूत अर्जर हिन्दुस्तान, पुरुषों के प्रायश्चित्त के इन्तज़ार में खड़ा है। यदि शिक्षित बहनें महिला-समाज के सुधार को अपने हाथ में लेकर एकदम खड़ी हो जायँ, तो हमारा उद्धार अति शीघ्र हो सकता है। अब फिर कभी परदे पर लिखूँगी। प्रसन्न रहना!

तुम्हारी—सहेली



पत्र १४

स्त्री की प्रभा

बेतूल

२ जुलाई, १६३४

प्यारी बहन,

तुम्हारा वह पहला पत्र और कल दूसरा भी पत्र मिला। मुझे तुम्हारी बेढंगी रफ़्तार देखकर ताज्जुब होता है। स्त्री के लिए कोई वस्तु संसार में पति से अधिक प्रिय नहीं है। पति ही गति है, पतिमर्यादा और पतिभक्ति की शक्ति बड़ी ही विचित्र है। जो बहनें पति की मर्यादा को समझती हैं, वे ही अपना जीवन सफल बनाती हैं। तुमने अपने लिए बिलकुल निखट्टू बनाने का जो ढोंग रचा है, वह सरासर निन्दनीय है।

स्त्री जाति ही संसार का प्राण है, और गृहस्थ की सुख-शान्ति, यश, मर्यादा, धर्म, कर्म, सब स्त्री के ही अधीन हैं। समाज और जाति की स्थिति, उन्नति व अवनति, स्त्री जाति के गुण-दोष पर ही निर्भर हैं। स्त्री अपने पुत्र के चरित्र-निर्माण में महत्त्वपूर्ण भाग लेती है।

यह एक ऐसा अमिट और सत्य सिद्धान्त है, जिसे कभी कोई झूठ नहीं कह सकता। इतना ही नहीं, नारी का प्रभाव पुरुषवर्ग पर भी किसी न किसी रूप में पड़ता ही है। माता जहाँ अपने पुत्र के भविष्य को बना या बिगाड़ सकती है, वहाँ पत्नी भी अपने पति के चरित्र को अपने पत्नीत्व के प्रभाव से कहाँ का कहीं ले जा सकती है। बिगड़े को सुधारना या सुधरे को बिगाड़ना, उसके बायें हाथ का खेल है। पुरुष अपने को स्त्री के स्त्रीत्व से कदापि बचाकर नहीं रख सकता। संसार के कई महापुरुषों के चरित्रों का भलीभाँति अध्ययन किया, तो उनमें केवल एक अटल सिद्धान्त यही देख पड़ा कि स्त्री के स्त्रीत्व के प्रभाव के कारण ही उनमें महत्ता आई है, चाहे यह प्रभाव मातृत्व के रूप में उन पर पड़ा हो, या पत्नीत्व आदि के रूप में पड़ा हो। इस सम्बन्ध में प्रायः सभी गण्यमान्य ग्रंथ भी अपनी साक्षी दे चुके हैं। विशेषकर पवित्र क़ुरान ने प्रकट किया है कि—

(१) यदि पुरुष को समस्त संसार का राज्य मिल जाय और स्त्री न हो, तो वह भिखमंगा है। इसके विप-रीत यदि निर्धन के पास अच्छी स्त्री है, तो वह चक्रवर्ती राजा है।

(२) यदि स्त्री न होती तो प्रेम न होता और जब प्रेम न होता तो आराम न होता। संसार में जो खूबी है,

वह एकमात्र 'स्त्री' के कारण है। यदि इस संसार में कोई ज्योति की रेखा है, तो स्त्री ही।

(३) स्त्री से हीन होकर मनुष्य की न तो समाज में प्रतिष्ठा ही होती है, और न उसे मानव जीवन का वास्तविक आनन्द ही मिलता है। सच बात तो यह है कि स्त्री ही मनुष्य की शक्ति, तथा उसके घर की लक्ष्मी है। उसके बिना मनुष्य का जीवन अधूरा है।

(४) स्त्री ही में समस्त प्रवृत्तियाँ अपने परम विकास की चरम सीमा पर पहुँचती हैं। पुण्य, प्रेम, व्यथा और आनन्द में, किसी भाव में क्यों न स्थित हो, पर स्त्री सदा ही अपूर्व संयम, दृढ़ निश्चय एवं कठोर आत्म-दमन का पूर्ण परिचय देती है।

(५) पुरुषों को अपनी स्त्रियों से सहृदयता के साथ व्यवहार करना चाहिए। यह बिलकुल सच है कि तुम उनके लिए ईश्वर के प्रति उत्तरदायी हो। ईश्वर की ही आज्ञा से तुमने उन्हें अपनी आज्ञाकारिणी बनाया है। ईश्वर ने तुम्हें स्त्रियाँ इसलिए दी हैं, कि तुम लोगों में प्रेम और सहानुभूति की लहर लहराती रहे।

ये सब हमारी महत्ता बता रहे हैं, लेकिन हम खुद आत्मगौरव का पतन करके कायर बन रही हैं। तभी तो कहते हैं—"मार-मार करे जाव, नामर्दी खुदा ने दी" तुम्हारी इस कविता "है जीवन मेरा मधुमाली" को

देखकर कितना विषाद पैदा होता है ? ईश्वर का दिया हुआ सौन्दर्य जवानी के आरम्भ में ही दीवाना बनकर अंग-प्रत्यंग से फूट निकला और मदभरी मस्ती, विलास की थोथी लालसा में लुट गई, यौवन असमय में ही विलीन हो गया, गुलाबी गालों की लाली, मदमाती आँखों की जादूभरी चितवन नष्ट हो गई और उसके स्थान में शरीर में झुर्रियाँ पड़ गई, अनारदाने काले पड़ने लगे, अंग-प्रत्यंग शिथिल हो गये, कमर टूट गई, आँखों से कम दिखने लगा, तब फिर पश्चात्ताप किया जाता है। इसलिए पहले ही से क्यों न सँभल लिया जाय ? अवश्य सँभलकर काम करना चाहिए। प्यारी बाई ! तुमने दरिद्रता का उल्लेख किया है, परन्तु तुम सचमुच निरी भोली हो। वास्तव में दरिद्रता ही वह शक्ति है, जिससे मनुष्य कार्य और उद्योग करने लगता है। केवल इतना ही नहीं, इसमें एक विशेष गुण भी है। यह मनुष्य को वास्तविक मनुष्य बनाती है। दरिद्रता से मनुष्य का उन हज़ारों-लाखों व्यक्तियों से सम्पर्क हो जाता है, जिनकी आवश्यकताएँ और दुःख-दर्द, स्वार्थ-परता और आत्मश्लाघा के कवच को भेद देती हैं, और उसकी आत्मा में विश्वात्मा की मधुर संगीत ध्वनि अनुप्राणित कर व्यक्तिगत स्वार्थ को संसार के स्वार्थ में विलीन कर देती है, जिससे वह समस्त संसार को

भली भाँति परख सकता है। अब तुम अपनी ग़लती देखकर फ़ौरन् सँभल जाओ। वर्ना तुम्हारा ही अपकार न होगा, तुमसे भी दूसरी बहनों पर बुरा प्रभाव पड़ेगा, और यह प्रभाव किसी दिन समाज को रसातल पहुँचा देगा, दूसरों के भरोसे बेगारी काम करने से कभी सफलता नहीं मिलती। बस, बिटिया को आशीष और पड़ोसिन दाई को सप्रेम अभिवादन कहना। आजकल मैं ग्राम सुधार में कुछ दिलचस्पी विशेष ले रही हूँ। क्योंकि इसकी अति आवश्यकता है। शेष फिर—

तुम्हारी ही......

पत्र १५

ज़ेवर का झगड़ा

बैतूल

१८ जुलाई, १९२४

प्रिय बहन !

परसों ही मुझे मालूम हुआ कि अब तुम सास-ननंद की चापलूसी में एकदम बोझा गाड़ी बन बैठी हो, और उन्हीं ज़ेवरों की बेड़ियों से ख़ूब नख़रे व नज़ाकतें भी तुममें आ गई हैं। क्या इसी से तो बीमार नहीं हो ? बहन ! सच्चा सौन्दर्य और गुण ज़ेवरों से नहीं झलकता। वह दक़ियानूसी समय गया, जब ज़ेवरों की ही भरमार से तारीफ़ होती थी। मैं तो अपने स्वास्थ्य के विरोध में मज़हबी किताबों का अड़ंगा भी नहीं लगा रहने देती। चाहे मुझे कोई कुछ भी कहे, सचमुच अब हमको संसार को आदर्श बनाने के लिए ज़ेवरों का बायकाट करना चाहिए। इन ज़ेवरों से जितना लाभ नहीं होता, उतनी हानि होती है। यदि इन्हीं तोड़े, पैजनी, नथ आदि की रक़म को हम किसी बैंक में जमा कर दें, तो अधिक सूद

मिले और कई लोगों को लाभ भी हो। भला कानों में बाली, झुमके, पत्ते, साँकलें और नाक में दोनों ओर लौंग, बुलाक, नथनी यह सब क्या शरीर को नष्ट करने के लिए नहीं हैं? क्या इनसे दुनिया भर का मैल इन अंगों में इकट्ठा नहीं होता? इन सब ज़ेवरों से आज असंख्य बहनें इस परिपाटी से चिपटकर अपने स्वास्थ्य और स्वभाव का सत्यानाश कर रही हैं। इससे आर्थिक जीवन भी विषम होता जाता है। यदि यही धनराशि शिक्षादीक्षा में लगे तो कितना उपकार हो? भला यह तो बताओ कि तुम भी गँवारनों की गप्पों में आकर देवी-देवता को मानने लगी हो। क्या ओझा, गुनिया, पंडे, कोई ईश्वर के अवतारी पुरुष हैं? मालूम होता है, अभी तक तुम पढ़ी-लिखी स्त्री होकर भी इस कपोल-कल्पित, अन्धविश्वास को नहीं छोड़ सकी हो। अरी बहन! बदमाश साधु और गुरुडे पुजारी ही तो हमारी ताक में रहकर सतीधर्म गारत कर रहे हैं? क्या तुमने अब तक इन भ्रष्टाचार्यों के अड्डे तीर्थों-मंदिरों में नहीं देखे? कितनी बहनें पतित हुईं और कितनी बरबाद हो रही हैं? अब हरएक पत्थर को पूजना, हरएक झाड़ को चिंदी बाँधकर चिन्दिया देवता बनाना, भयंकर भूल है। तुमसे तो आशा थी कि देहात में जाकर कुछ अच्छी बातें सिखाओगी, परन्तु तुम ही गीदड़ भभ-

कियों में फँस गईं। क्या शिक्षा और सभ्यता, सुधार और उन्नति सब भूल ही गईं? धिक्कार है, तुम्हारे इन दक़ियानूसी विचारों पर! या तो कुछ आदर्श दिखाने के लिए अन्धविश्वास का भूत उस ग्राम भर से भगा दो, अन्यथा चुल्लू भर पानी में डूब मरो। बस, मुझे अब रोना आता है। जब तुम पश्चात्ताप कर लोगी, तभी पत्र लिखूँगी, अन्यथा राम राम।

तुम्हारी ही.........

पत्र १६

पर्दा

बैतूल

२० जनवरी, १९३७

प्रिय बहन,

तुम मेरे पीछे सत्तू बाँधकर पड़ी हो कि मैं पर्दे पर लिखूँ। परन्तु तुम्हें मालूम होगा कि भारत की १५ प्रतिशत मुस्लिम महिलाएँ ही पर्दा करती हैं, क्योंकि जन-संख्या का ८० प्रतिशत भाग ग्रामों में निवास करता है, और ग्रामीण बहनें अपनी घर-गिरस्ती का तथा खेती-किसानी का सारा काम पुरुषों के साथ करती हैं। इसी तरह शहरों की भी ग़रीब मुस्लिम बहनें मज़दूरी आदि करके अपनी गुज़र-बसर करती हैं। उन्हें बुर्क़ा आदि की ज़रूरत नहीं। वे पर्दे से घृणा ही नहीं अपनी आमदनी को बाधक समझकर उधर ध्यान ही नहीं देतीं। मुझे आश्चर्य है कि अमीर घरों का उदाहरण लेकर पर्दे का डंका क्यों पीटा जाता है। पर्दे के कारण स्वास्थ्य ही नहीं बिगड़ता, बल्कि पैसा

भी फ़िज़ूल ख़र्च होता है। परन्तु इस पर ध्यान ही किसी का नहीं जाता। बहुत से पुरुष स्वास्थ्य के लिए कई उपाय बताते हैं; परन्तु यदि उनसे कहा जाय कि तुम भी इन पर अमल करो, तब हम पर यह प्रतिबंध लगाना, तो वे खिसक जायँगे। पुरुष इसलिए हमें सन्दूक़ में बन्द करते हैं कि वे हमारे रक्षक व पोषक हैं और हम उनकी पैरों की जूती बनी हुई हैं। मैं नहीं समझती कि हम लोगों को मर्द क्यों छुईमुई बना रहे हैं? क्या अस्मत (पतिव्रत) हवा लगने से ही उड़ जाती है? नहीं? बात यह है, कि पहले पुरुष ही लेखक, कवि और धर्म ग्रन्थों के रचयिता थे, इस कारण उन्होंने अपने स्वार्थ के लिए मनमाने जाल बनाकर हमको काठ की पुतली बना दिया है। अब हमें इनसे गिड़-गिड़ाकर अपनी उन्नति का मार्ग नहीं बनाना चाहिए। वरन् हम अपने पैरों पर खड़े होकर अपनी सिपाहियाना लड़ाई से उन ज़ंजीरों को, जो इस वक़्त तक हम किसी अभियोग के बिना जकड़े हुई थीं, टुकड़े-टुकड़े करके फेंक देंगी। संसार की स्त्रियाँ हमारी इस बग़ावत के निर्णय को उत्सुकता से इन्तिज़ार कर रही हैं। यदि हम न चेतीं, तो संसार में हमारी बदनामी होगी। इसलिए अब कमर कसकर हमारी शिक्षित महिलाओं को क्षेत्र में उतर पड़ना

चाहिए। पर्दा, आँख का और बुरे कर्मों के रोकने का ही शोभित होता है। आओ! मैं तुम्हारा पूरा साथ दूँगी। अपनी मंडली से भी मेरा यह सन्देश कह दीजिए। शेष शुभ। फिर कभी।

आपकी—सहेली

पत्र १७

मुख्य सुधार

बेतूल

१० सितंबर, १९२५

प्रिय बहन,

सदा खुश रहो।

फिर भी आपका तक़ाज़ा आ धमका। जिज्जी! यह हमारा स्वाभाविक कर्तव्य है कि हम अपने जीवन को बुराइयों से बचावें, और सुख-चैन से संसार में रहने का प्रयत्न करें। कुछ व्यक्ति ऐसे हैं, जो अपने को काँटों में गिराकर अविश्वास पर आरूढ़ होते हैं, और अपने मुक़ाबले में दूसरों के विचारों को स्थान नहीं देते। व्यक्तिगत विरोध और सिद्धान्त के सामने जिन्हें दूसरों के उत्साह और कृतज्ञता को पहचानने का ध्यान नहीं होता, उन्हें कभी आनन्द और आराम नहीं मिल सकता।

व्यर्थ जगत में जीवन उनका, जिनको कुछ भी ध्यान नहीं।
खाते ठोकर वे पल पल में, कष्टों का अवसान नहीं॥

हम आराम से तभी रह सकती हैं, जब दूसरे हमसे प्रसन्न हों। अपने सुख के साथ दूसरों की भलाई का विचार भी हमें भली भाँति रखना चाहिए। जो धनवान् और रईस हैं, वे गर्व के नशे में अपनी दुनिया अलग क़ायम करना चाहते हैं। दुखियों, आश्रितों की गाथा सुनने को उन्हें समय ही नहीं मिलता। इनका जीवन शुष्क और निरे भोंदूपन से ही व्यतीत होता है। हमको आपस में सहयोग रखकर एक दूसरे की सहायक और प्रियपात्र बनना चाहिए। इसी में हमारी भलाई है। आप अपने हृदय में सहानुभूति का उत्साह पैदा कीजिए, दीनों की इच्छाएँ पूर्ण कीजिएगा। उस व्यक्ति का जीवन स्वयं दुखी रहता है, जो नये-नये झगड़े-फ़साद पैदा करके औरों को व्यर्थ तंग करता है। जैसे हमारे साथ बुराई करनेवाला हमें बुरा दिखता है, वैसे ही दूसरे के साथ हमारी बुराई से उसे भी दुःख पहुँचेगा। संसार एक दर्पण के सदृश है। यदि हमारा व्यवहार और सारा काम दूसरों के लिए लाभदायक है, तो हमारा चेहरा भी ऐसा दिखेगा, और अन्य भी उत्तम व्यवहार करेंगे। यथार्थ में यही सुख की कसौटी है। अपने क्षणिक आवेगों में स्वार्थवश इस तरह मतवाली बनने से कोई लाभ नहीं होता। अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं का दमन करो, फिर सच्चा आनन्द खुद-ब-खुद मिल जायगा। अपनी ज़िम्मेदारी

बहुत बड़ी है, उसका रहस्य भी महान् है और शक्ति भी बड़ी है। हम उन्हीं सीता-सावित्री को आदर्श समझकर अपने को अधिक बलवती, चरित्रवान् और अधिक उपकारिणी बना सकती हैं। संसार की वृद्धि और रक्षा तथा सुधार का काम हमारे ही ज़िम्मे है। परन्तु वह Chastity is life and sensuality is death के आधार पर ही है। हाँ, आत्म-गौरव का पतन भी न करना चाहिए। मनुजी ने कहा है, "ओ सम्राज्ञी श्वशुरेभव सम्राज्ञी श्वश्र्वाभव। ननन्दिरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधिदेवृषु।" अब मैं शीघ्रता में हूँ, इसलिए फिर कभी लिखूँगी। तुम आज से ही इस महान् व्रत की दृढ़ प्रतिज्ञा कर लेना। मुन्नी को प्यार कहना।

तुम्हारी—सहेली

पत्र १८

ग्राम-सुधार

बेतूल

५ जनवरी, १९३५

प्रिय बहन,

ता० ३० दिसम्बर का तुम्हारा कृपापत्र मिला। पत्र क्या है? एक जीती-जागती तसवीर है, जिसे मैं जितना देखती हूँ, उतनी ही विकलता बढ़ती है। समझ में नहीं आता कि हम स्त्रियाँ इन पुरुषों की कब तक जूतियाँ बनी रहेंगी? उपाय! उपाय!! यह है, कि अब क्रान्तियुग है। इसलिए साहस करके कूढ़मगज पोपों की खूब खबर ली जाय, तभी ये सजग होंगे। जब तक हम खुद मैदान में न उतरेंगी, तब तक इन्हें होश न होगा, इनसे प्रार्थना करना, सत्याग्रह करना, या और भी कोई सेवा करना बेकार है। "सीधी उँगली घी कभी नहीं निकलता"। बरसों के चोचले और आडम्बर को निकालने के लिए सच्चे पौरुष की आवश्यकता है। बस, यही नुसखा तुम्हारे डुकरिया पुराण का मैं खोज

सकी हूँ। अब तुम मुझसे पूछती हो कि यहाँ कैसे आई। यह तो खुद समझ लेना चाहिए कि "जहाँ सुई वहाँ डोरा" रहता है। भला चाँद से चाँदनी अलग कैसे रह सकती है? इसी आधार से मैं भी इनके साथ आ गई हूँ। देशभक्ति के पुरस्कार में पतिदेव को नौकरी से छुट्टी मिल गई। इसलिए अपने मध्य प्रान्त में रहने की हम लोगों ने बात सोची और बहुत विचार करने के बाद बेतूल रहने का निश्चय किया। बेतूल, स्वास्थ्य के लिए एक अति उत्तम स्थान है। यहाँ सदैव शीत की कृपा रहती है। बेचारे यहाँ के आदमी भी हमारी मदद को हर वक़्त तैयार रहते हैं। अब यहाँ भी कुछ लिख-लिखाकर जैसे—तैसे हम गुज़र कर रहे हैं। बेचारे कुछ दयालु पत्र-सम्पादक हमारे लेखादि लेकर मासिक सहायता करते रहते हैं। बस, यही फ़िल-हाल दाल-रोटी का ज़रिया है। दूसरे पतिदेव 'ग्राम-सुधार' में इतना हिस्सा ले रहे हैं कि सारे ज़िले के ग्रामीण हमें देवता के समान मानकर पूजा करते हैं। मैंने भी हाथ के कुटे चावल, हाथ के पिसे आटे और (शक्कर के बजाय) गुड़ खाने का विशाल प्रचार किया है, जिससे कई बहनों का स्वास्थ्य सुधर गया है, बदन में फ़ुर्ती आ गई तथा उनका समय इधर-उधर फ़ालतू कामों में नहीं नष्ट होता। कई स्त्रियाँ सास-नन्दों के अप-

बादों से भी बच गई हैं। सबसे मुख्य तो यह है कि पैसे की बचत भी होने लगी है। दो-तीन अंधी और लूली बुढ़ियाँ तो हमारी आशीष के लिए दैनिक पाठ ही करने लगी हैं। मुहम्मदअली हेड क्लर्क की दुल्हन, सैकड़ों रुपये वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों को खिला चुकी थी, फिर भी शारीरिक सुख उसे दुर्लभ था। मैंने एक दिन इनकी दोनों नौकरानियों को विदा करा-कर कहा कि तुम्हारा इलाज तुम्हारे ही हाथ में है। तुम खुद बर्त्तन मॉजो, मसाला पीसो, चक्की चलाओ, रोटी पकाओ, और अपने सारे कपड़े घर में ही धोओ। फिर एक मास में देखो, क्या से क्या होता है। चूँकि, आरामतलब बहन ने बुरा तो माना, लेकिन वह अपने हाथ से काम करने लगीं। इन्हें कुछ आराम सा मिला। हाज़मे के चूर्ण को छोड़कर, सोडावाटर पीना बंद कर, तथा मोटर में सुबह-शाम घूमना छोड़कर चूल्हे-चक्की में कमर कसी। इससे इनके वे आलस्य के मर्ज़ एकदम रफ़ूचक्कर हो गये। फिर मेरे पास १।) की मिठाई लेकर आईं। मुझे खूब हँसी आई, कि यह तावीज़-गंडा, या कोई मौलवी की दुआ नहीं है, यह किसी पीर की मन्नत नहीं है—यह तो हमारे गृहस्थ की वास्तविक सुख की कुंजी है, जिसे हम पश्चिमी सभ्यता के नशे में छोड़कर दुखी हो रहे हैं। यही सुधार व देहातों

में 'ग्राम-सुधार' कहा जा रहा है। बस, उस दिन से मैं वैद्या बन गई हूँ, और नित्य दो-चार बहनें मेरे पास आने लगी हैं। बहन, लम्बे-चौड़े लेक्चरों से कुछ नहीं होता। यदि स्त्री-समाज अपने हाथ में कोई भी सुधार ले ले, और ख़ुद करके बतलावे तो हमारे देश में एकदम सफलता का चिराग जलने लगेगा। बेकारी, विलासिता और स्वतंत्रता तथा सामाजिक उथल-पुथल के लिए पुरुषों ने कुछ उछल-कूद की है, परन्तु फल अभी तक सेर में छटाँक भी नहीं नज़र आता। मैं तो कहती हूँ कि पुरुष लोग अब अपना चार्ज स्त्रियों को दे दें, और वे विलायत का सैर करें। स्त्रियाँ उतने साल की बनिस्बत उतने महीने या दिनों में ही सब काम बना लेंगी। उनकी संतति भी वैसी ही होगी। हमको सिर्फ़ पुरुषों के विलास के लिए व संतान पैदा करने की मशीन बनकर न रहना चाहिए। समयानुसार देश और समाज के कामों में भरपूर भाग लेना चाहिए। यदि संतान-भक्ति का मर्ज़ हम निकाल दें, तो फिर सचमुच एक भव्य कार्य दृष्टिगोचर होगा। अब भोजन बनाने का समय हो गया है, इसलिए क्षमा करना। फिर कभी लिखूँगी। यदि हो सके तो एक दिन के लिए चली आओ।

तुम्हारी......

पत्र १६

दूषित वायु-मंडल से बचना

बेतूल

१३ फरवरी, १९३९

प्यारी बहन,

कल तुम्हारी अप-टू-डेट चिट्ठी मिली थी। पढ़कर कुछ आश्चर्य हुआ। इसलिए कि तुम इतने शीघ्र कैसे नये रंग में रँग गई हो, और कैसे तुमने साहस कर लिया है। इसमें आश्चर्य के साथ कौतूहल ही रहा हो, यह बात नहीं—प्रसन्नता भी यथेष्ट मात्रा में है। लेकिन कुछ ही देर बाद मुझे अब "स्त्री-समाज का बंटाढार" नज़र आने लगा है। इस सञ्ज़बाग़ से क्षोभ की लहर उमड़ पड़ी है। बहन! तुमने जो निर्भीकता से लिखा है, कि—

"हर तरफ़ है काम-क्रीड़ा और हम जोगिन बनें।"

इसका क्या अर्थ है? क्यों ज़रा सी भूल से अशान्ति के सागर में ग़ोते खा रही हो? तुमने कई आध्यात्मिक ग्रन्थ पढ़े हैं, भले-बुरे का विचार भी अच्छी तरह जानती

हो, फिर क्यों थोड़े से शेष जीवन में कलंक का टीका लगाती हो? क्षणिक सुख के लिए अपने आदर्श की हत्या करने से क्या लाभ होगा? यह गति विधि तुम्हें कहाँ ले जा रही है, क्या इसको तुमने कभी सोचा है? क्या पति केवल भोग-विलास के ही लिए है, क्या पति केवल दर्शनी हुण्डी और सुन्दर-सद्गुणी ही होना चाहिए? नहीं!

तुमने दुनिया को पहचानने में शुरू से ही गलती की है। दुनिया सुख-विलास की क्रीड़ा-भूमि नहीं है। यह युद्ध भूमि है। दुख-सुख से लड़ते रहना ही यहाँ का धर्म है। जो केवल यहाँ रहकर सुख की ही आकांक्षा रक्खेगा, ऐश ढूँढ़ेगा, वही धोखा खायगा। उसे ही भटकना और निराश होना पड़ेगा। वही संसार में पग-पग पर छला जायगा, प्रतारित होगा। तुम जगत् को उल्टे ढंग से समझने की कोशिश ही क्यों करती हो? यदि कष्ट सहते-सहते बिलकुल तंग आ चुकी हो, दुर्बल हो गई हो, झगड़े-झमेलों से ऊब गई हो, तो क्या भाग जाना चाहती हो? किन्तु यह भी नहीं होने का। भागकर पीछे जाने का पथ तो मनुष्य को है ही नहीं। लड़ना तो पड़ेगा ही; चाहे हँसकर लड़ो, चाहे रोकर। कर्तव्य तो तभी समझा जायगा, जब खुले मैदान लड़कर, अपनी वासनाओं को परास्त कर जीवन की विजय-ध्वजा खड़ी

कर सको। सृष्टि के आरम्भ से ही मनुष्य मे लड़ने की प्रवृत्ति रही है; वह अब भी है; और वीरों के लिए ज्यों की त्यों बनी रहेगी। सभी लड़े हैं, सभी लड़ते हैं, सभी को लड़ते रहने से प्रेम है। फिर तुम्ही उससे अलग होकर कैसे छुटकारा पा सकती हो? लुत्फ़ तो उसी में है। जिधर आँख उठाकर देखो, दो चीज़ें एक साथ मिलकर ही काम कर सकती हैं। दो विभिन्न तत्वों से कदाचित् संसार का ही निर्माण हुआ है। विभिन्न होते हुए भी वे एक दूसरे के लिए नितान्त अपेक्षित हैं। वे दोनों ही जीवन के लिए समान उपयोगी हैं। एक के बिना दूसरा अपूर्ण और अधूरा है। यह मैं मानती हूँ कि अपने में कोमलता ही अधिक है; लेकिन अब तो वीरत्व की आवश्यकता है।

केवल नाज़ुक रहकर क्या दुनिया में कोई चल सकता है? या कभी चल सका है? जीवन खिलवाड़ करने की चीज़ नहीं है वह एक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है। आज चाहे भले ही तुम उससे खेल कर लो, पर आगे चलकर इसके लिए तुम्हें पछताना ही पड़ेगा। यही जीवन का ध्रुव यश है। तरुण जीवन में मन्थरता नहीं, गतिशीलता है। तुम भले ही उसकी प्रगति रोक दो, पर वह तो नहीं रुकेगा। उद्देश्य यदि कोई न होगा, तो वह निरुद्देश्य ही प्रवाहित होगा, किन्तु प्रवाह

में अन्तर नहीं आ सकता। जानती हो इसका परिणाम क्या होगा ? लेकिन नही, परिणाम पर पहुँचने की अभी कोई इतनी जल्दी नही है । फिर भी मैं तुम्हें सावधान किये देती हूँ, तुम एक बार मेरी बातों पर विचार करना। मैं भाग्य को भी दोष नही देती। हाँ,समाज अवश्य दोषी है, जो अभी तक अन्धा बनकर हम अबलाओं को पार लगाने के लिए अथवा सुधार करने के लिए तैयार नहीं है। असल में दिखावटी-सुधारक पुरुष ही चिकनी मिट्टी देखकर फिसल पड़ते हैं। फिर हम ऐसे पुरुषों से क्या आशा रक्खें ? यदि हम ही जाग्रत् होकर अपना मार्ग उज्ज्वल बनावें, तभी हमारा बेड़ा पार लग सकता है । अन्यथा नहीं।

तुमने अपने पति की दिल खोलकर पोल खोली है, इसलिए कि शायद मैं तुम्हें आज्ञा दे दूँ कि पति की लापरवाही से तलाक़ देकर अलग हो जाओ। बहन कहने सुनने के लिए स्वतंत्रता का ढोल बजाया जाता है, परन्तु काम वैसा करना बिलकुल असंभव है। अपने पति की पूजा करो। वह जो कुछ करता है, अच्छा ही करता है। विलायती हवा के झोंकों से बचकर भारतीय सभ्यता का मनन करो। इसी में भलाई है।

तुम्हारी—सहेली

पत्र २०

अनमोल मोती

बेतूल

१७ मार्च, १९३५

प्रिय बहन,

सदा प्रसन्न रहो।

आपके कई पत्र तरह-तरह की समस्याओं को लेकर उपस्थित हुए। परन्तु मैं बीमार थी, इसलिए आपके पत्रों का भलीभाँति उत्तर न दे सकी। क्षमा करिएगा। आप चुने हुए मोतियों का हार बनाने को उत्सुक हैं। मैं अब इकट्ठे अटूट अनमोल मोती भेज रही हूँ। ये मोती बड़े परिश्रम से चुनकर रक्खे हैं. इनका मूल्य भी अगर हो सके तो जौहरी गण से जाँच करा-कर भिजवा देना। इन पर अमल अवश्य करना।

(१) जो व्यक्ति सदैव सांसारिक दुःख उठाकर भी धैर्य के साथ सुखी जीवन व्यतीत करता है, वही धन्य है।

(२) बुरों की जो भलाई करते हैं, वे ही सन्त हैं।

(३) श्रेष्ठ वह है, जो सत्य, न्याय, कृपा, शान्ति आदि के साँचे में ढला हो।

(४) प्रसन्नचित्त, फ़ुर्त्ती, आज्ञाकारी होना बड़े पुरुषों की कसौटी है।

(५) दम्पतियों को नित्य आपस में विश्वस्त रहना चाहिए।

(६) प्रत्येक व्यक्ति को ईश्वर की अनन्य उपासना करते ही रहना चाहिए।

(७) प्रत्येक को अपने कर्तव्य का सदा पालन करना चाहिए।

(८) हमें अपना जीवन दूसरों की भलाई में ही अर्पण करना चाहिए।

(९) सभ्यता और शिष्टाचार का कमी कभी न होने पावे।

(१०) विवाहित जीवन ही जाति, धर्म तथा देश का महान् धन है।

(११) जो सच्चे मन से ईश्वरीय आज्ञा का पालन करता है, वही श्रेष्ठ है।

(१२) दीन, दुखिया, अपाहिज, अनाथों की रक्षा करो; क्योंकि ईश्वर उनको सदैव देखता है।

(१३) प्रत्येक बहन को अपने पति व अपने कुटुम्ब का सुयश बढ़ाने की चिन्ता करती रहना चाहिए।

(१४) ईश्वर जो कुछ करता है, वह अच्छा ही करता है।

(१५) दूसरों के दोषों को मत देखो, वरन् सदैव उनको ढको।

(१६) हमेशा दूसरों की लड़ाई में मेल कराती रहो।

(१७) कुसंगति से बचो, और किसी पर अत्याचार न करो।

(१८) जो काम तुम्हें करना है, उसमें दूसरों का सहारा मत लो।

(१९) अपना-आपुसी व्यय बहुत ही कम करो।

(२०) अपनी की हुई प्रतिज्ञा सदैव पूरी करो।

(२१) विद्या और सत्कार्य मनुष्य के नेत्र हैं, इनके बिना वह अन्धा है।

(२२) किसी से विवाद न करो। तुम दूसरे का मान करोगी, प्रेमभाव रखोगी तो दूसरे भी वैसा ही करेंगे।

(२३) दिन को ऐसे काम करो कि रात्रि को सुख से सो सको।

(२४) अपने मनुष्य शरीर से कोई भी काम ऐसा करो, जिससे समाज व देश में तुम्हारा नाम अमर रहे।

(२५) मधुर भाषण करने से अति लाभ होता है। असावधानी, चित्त की चंचलता, रोष, ईर्षा, छल, कपट, झूठ, अभिभाव, खलता, हिंसा, अहंकार, विद्वेष, धूर्त्तता, चोरी, क्रोध, कुसमय सोना, बिना पति की आज्ञा इधर-उधर जाना, दूसरों के यहाँ सो रहना, दरवाज़े पर खड़ी रहना, चपलता, परपुरुष की ओर देखना, गन्दी पुस्तकें पढ़ना, घरवालों के विरुद्ध काम करना, चुगली करना इत्यादि अवगुण स्त्री के लिए विशेष कलङ्क हैं। इनसे सदैव बचते रहना चाहिए। इन अनमोल मोतियों के हार को अब सदैव पहने रहना। एक छोटा सा हार इनमें से चुनकर अपनी छोटी सी बिटिया मुन्नी के भी गले में डाल देना। फिर देखना तुम्हारी पड़ोसिनें कितने हार बनवावेंगी। अधिक पत्र-व्यवहार से दद्दाजी नाराज़ होते हैं, इसलिए यहाँ से अब पत्र न लिखूँगा। सबको यथानुकूल बन्दे कहना। शेष शुभ है।

तुम्हारी—सच्ची सहेली

MY OPINION.

Having looked to the advancement of the world, our Indian sisters are now coming forward, and have well undeistood the fact that they can only advance by their own efforts, and therefore few of them have come forward, by placing their idea through their literatures, before the public. Although I have no knowledge of Hindi, yet having gone through the subjects of *Sahele-ke-Patr,* I have formed an opnion that the literature is of a high standard, easy and contains the required subjects one needs. Although there are good many books in English, but Hindi has none to meet the requirements. I am glad to find that *Sahele-ke-Patr* contains subjects for the daily life, which as a matter of fact was needed.

The writer of this little book, is the wife of a journalist, Mr. Syed Kassim Ali Sahitya Alankar, a renowned writer of Hindi literature. I presume that the Hindi-knowing circle would encourage the writer and congratulate her for her services to the Country.

I strongly recommend that such a useful work must be sanctioned as a text-book by the C. P. Education Board. It will be a good guide for girls in their whole life journey.

PROPRIETOR,
E. S. Ch. Works.

Betul.
13th August 1935.